न्यायालय

सहायक कलक्टर/उपखण्ड अधिकारी

गुढामालानी–बालोतरा

(पीठासीन अधिकारी –केशव कुमार मीना आर.ए.एस.)

वाद संख्याः– 2025/5(7/2025) दर्ज तिथिः– 20.01.2025

1. भागुकंवर पुत्री गुणेशाजी पत्नी भटसिंह
   जाति राजपूत पता 1 गेहुवाली नाडी नाकोड़ा तहसील सिणधरी 2 आलपुरा तहसील गुड़ामालानी

............................वादी

बनाम

1. चतरसिंह पुत्र गुणेशाजी
   जाति राजपूत निवासी आलपुरा तहसील गुड़ामालानी
2. चम्पाकंवर पुत्री गुणेशाजी पत्नी घमण्डसिंह
   जाति राजपूत निवासी गेहुवाली नाडी नाकोड़ा तहसील सिणधरी
3. दरियाकंवर पुत्री गुणेशाजी पत्नी मानसिंह
   जाति राजपूत निवासी मिठौड़ा
4. पखीकंवर उर्फ पवनकंवर पुत्री गुणेशाजी पत्नी सरदारसिंह
   जाति राजपूत निवासी आलपुरा तहसील गुड़ामालानी
5. विरधाराम पुत्र सांवलाराम
   जाति पुरोहित निवासी आलपुरा तहसील गुड़ामालानी
6. आसूराम पुत्र भारताराम
   जाति विश्नोई निवासी जुगताणियों की ढाणी, आलपुरा तहसील गुड़ामालानी
7. चन्दनसिंह पुत्र घमण्डसिंह
   जाति राजपूत निवासी गेहुवाली नाडी नाकोड़ा तहसील सिणधरी
8. माधोसिंह पुत्र तेजसिंह
   जाति राजपूत निवासी जीवाणियों की ढाणी तहसील गुड़ामालानी
9. बाबूलाल पुत्र भींयाराम
   जाति सोनी निवासी निम्बलकोट तहसील नोखड़ा जिला बाड़मेर

..........................प्रतिवादी

उपस्थित अधिवक्ता
वादीः– श्री नारायण कुमावत
प्रतिवादीः– श्री रामजीवन विश्नोई
श्री जगदीश विश्नोई
श्री जगदीश कड़वासरा

राजस्व वाद अन्तर्गत धारा– 88,188
राजस्थान काश्तकारी अधि0–1955

—:निर्णयः—

निर्णय तिथिः—25.05.2026

1. आज यह पत्रावली दावा बाबत् इस्तकराहक्क अन्तर्गत धारा—88, 188 राजस्थान काश्तकारी अधिनियम—1955 का वास्ते निर्णय हेतु पेश हुई। हस्तगत वाद पत्र निणर्यन हेतु प्रकरण का सारतः सूक्ष्म विवरण इस प्रकार से हैः—

   - कि हाल आराजी खसरा संख्या 113/1 रकबा 2.8490 है0, 201/1 रकबा 1.0441 है0, 201/2 रकबा 1.3031 है0, 209 रकबा 0.8579 है0 एवं 209/3 रकबा 0.1619 है0 मौजा आलपुरा तहसील गुड़ामालानी में वादीगण के पूर्वज गुणेशा पुत्र पना के समय की खातेदारी आराजी दर्ज रिकार्ड है।
   - कि वादीगण हिन्दू होने के कारण हिन्दू उतराधिकार अधिनियम—1956 से शासित होते है। वादीगण के पिता गुणेशा पुत्र पना के फौत होने पर उनके एक पुत्र चतरसिंह पुत्र गुणेशा एवं चार पुत्रियां चम्पा पुत्री गुणेशा, दरिया पुत्री गुणेशा, पंखी पुत्री गुणेशा एवं भागु पुत्री गुणेशा वारिस हैं। जिनका पूर्वज गुणेशा पुत्र पना की उक्त खातेदारी आराजी में 1/5—1/5 बहिस्सा बराबर के हक अधिकार निहित हैं।
   - कि वादीगण अपने पूर्वज गुणेशा पुत्र पना के वारिस होने के कारण अपने पिता के साथ सहदायिकी तथा संयुक्त हिन्दू परिवार के सदस्य होने के कारण उक्त आराजी में जन्म से ही हक निहित होने के कारण अधिकार रखते है। इस स्थिति में उक्त आराजी में वादीगण के पिता गुणेशा पुत्र पना के हिस्से में वादी का 1/5 हिस्सा कानूनन निहित है। वादीगण एवं प्रतिवादीगण का पारिवारिक सजरा निम्न प्रकार है—

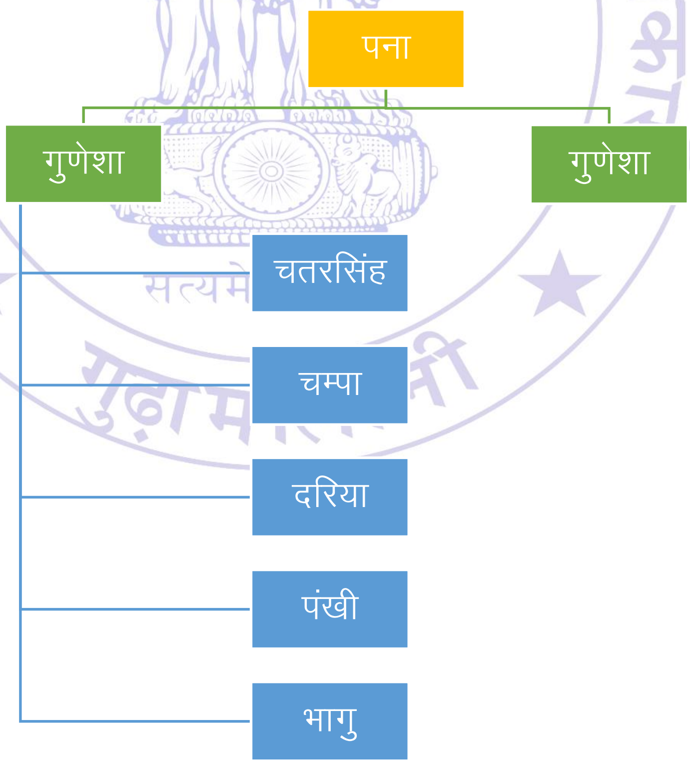

   - कि खातेदार गुणेशा पुत्र पना के फौत होने पर गुणेशा पुत्र पना का फौतगी नामांतरकरण गुणेशा पुत्र पना के जायंदा वारिसान पुत्र चतरसिंह पुत्र गुणेशा एवं चार पुत्रियां चम्पा पुत्री गुणेशा, दरिया पुत्री गुणेशा, पंखी पुत्री गुणेशा एवं भागु पुत्री गुणेशा के नाम खोला जाना था। परंतु उक्त नामांतरकरण

प्रतिवादी संख्या 01 एवं स्व0 गुणेशा की पत्नी मीरोदेवी के नाम खोला गया। इस प्रकार गुणेशा पुत्र पना की वैध वारिस वादीनीगण को अपने पिता की सम्पत्ति से वंचित रखकर कानूनी भूल की है। साथ अपने हिस्सा अनुसार वादीगण का मौके पर कब्जा काश्त जारी है।

- कि वादग्रस्त आराजी में वादीनी की माता मीरो के देहांत पर फौतगी नामांतरण वादीनी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 के नाम खोला गया। परंतु उक्त नामांतरण में वादीनी का हिस्सा 1/10 अंकित किया गया। जबकि वादीनी एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 का बहिस्सा बराबर 1/5—1/5 निहित था। इस प्रकार स्व0 गुणेशा एवं स्व0 मीरो के फौतगी नामांतरण दर्ज करते समय वादीनी के हक अधिकारों का ध्यान नहीं रखा जाकर गलत नामांतरण पारित किये जाकर वादीनी को अपने पैतृक हक—हिस्से से वंचित रखा गया है।
- कि उक्त आराजी में प्रतिवादीगण संख्या 01 एवं वादीनी की माता मीरो को बिना विभाजन, बिना सहदायकों की सहमति के उत्तरोत्तर बयनामा दिनांक 22.05.2009, 10.10.2012 एवं 20.11.2024 द्वारा प्रतिवादी संख्या 05—08 के पक्ष में बयनामा निष्पादित करवाने का अधिकार नहीं था। उक्त बयनामा में वादीगण के पक्षकार नहीं होने के कारण वादीगण उक्त बयनामा दिनांक 22.05.2009, 10.10.2012 एवं 20.11.2024 से पाबंद व जिम्मेदार नहीं है। इस कारण वादीगण उक्त विवादित बयनामा दिनांक 22.05.2009, 10.10.2012 एवं 20.11.2024 को आरंभ से शून्य, अवैध व निष्प्रभावी घोषित करवाने के अधिकारी है। इस आधार पर वादीगण अपने हिस्से की पैतृक भूमि में घोषणा करवाने के अधिकारी है।
- कि वादीगण एवं प्रतिवादीगण संख्या 01—04 के अपने पूर्वज गुणेशा पुत्र पना के वारिस होने के कारण अपने भाईयों—बहनों के साथ सहदायिकी तथा संयुक्त हिन्दू परिवार के सदस्य होने के कारण उक्त आराजी में जन्म से ही हक निहित होने के कारण अधिकार रखते है। उक्त आराजी पर वादीगण का कब्जा है। एक सहदायक का कब्जा सभी सहदायकों का कब्जा माना जाता है। इस कारण उक्त आराजी में प्रतिवादीगण संख्या 01 एवं वादीनी की माता मीरोंदेवी को बिना विभाजन, बिना सहदायकों की सहमति के बयनामा दिनांक 22.05.2009, 10.10.2012 एवं 20.11.2024 द्वारा प्रतिवादी संख्या 05—08 के पक्ष में बयनामा निष्पादित करवाने का अधिकार नहीं था। प्रतिवादी संख्या 05—08 एक अजनबी क्रेता है। इस प्रकार प्रतिवादी संख्या 05—08 के एक अजनबी क्रेता होने के कारण उक्त आराजी पर कब्जा करने हेतु आमदा है। प्रतिवादी संख्या 05—08 के एक अजनबी क्रेता होने के कारण अवैध रूप से कब्जा प्राप्ति के कारण प्रतिवादी संख्या 05—08 का कब्जा अतिक्रमण माना जाकर प्रतिवादी संख्या 05—08 को अतिक्रमी माना जाएगा।
- कि बयनामा दिनांक 22.05.2009, 10.10.2012 एवं 20.11.2024 में वादीगण के पक्षकार नहीं होने के कारण वादीगण उक्त बयनामा दिनांक 22.05.2009, 10.10.2012 एवं 20.11.2024 से पाबंद व जिम्मेदार नहीं है। इस कारण वादीगण उक्त विवादित बयनामा दिनांक 22.05.2009, 10.10.2012 एवं 20.11.2024 को आरंभ से शून्य, अवैध व निष्प्रभावी घोषित करवाने के अधिकारी है।

- कि प्रतिवादी संख्या 05—08 एक अजनबी क्रेता है। इस प्रकार प्रतिवादी संख्या 05—08 के एक अजनबी क्रेता होने के कारण उक्त आराजी पर कब्जा करने हेतू आमदा है। उक्त आराजी पर वादीगण का कब्जा है। एक सहदायक का कब्जा सभी सहदायकों का कब्जा माना जाता है। इस आधार पर प्रतिवादी संख्या 05—08 के विरूद्ध वादीगण स्थायी निषेधाज्ञा प्राप्त करने के अधिकारी है।
- कि उक्त आराजी में प्रतिवादी संख्या 01 एवं वादीनी की माता मीरोंदेवी को बिना विभाजन, बिना सहदायकों की सहमति के बयनामा दिनांक 22.05.2009, 10.10.2012 एवं 20.11.2024 द्वारा प्रतिवादी संख्या 05—08 के पक्ष में बयनामा निष्पादित करवाने का अधिकार नहीं था। इस कारण प्रतिवादी संख्या 13 एक अजनबी क्रेता है। इस प्रकार प्रतिवादी संख्या 05—08 के एक अजनबी क्रेता होने के कारण उक्त आराजी पर कब्जा करने हेतु आमादा है। इस प्रकार वादीगण को उक्त दावा हेतु बिनायदावा उत्पन्न हुआ है।
- कि वादीगण के उक्त आधारों पर निम्न अनुतोष निवेदित हैः—
    1. उक्त आराजी में वादीगण के पिता गुणेशा पुत्र पना के हिस्से में प्रत्येक वादी का 1/5 हिस्सा घोषित किया जाकर सहखातेदार घोषित किया जावे।
    2. वादीगण के हक हिस्से में से प्रतिवादी संख्या 01 एवं माता मीरोंदेवी द्वारा प्रतिवादी संख्या 05—08 के पक्ष में निष्पादित बयनामा दिनांक 22.05.2009, 10.10.2012 एवं 20.11.2024 वादीगण के अधिकारों के प्रति आरंभ से शून्य, अवैध व निष्प्रभावी घोषित किया जाकर प्रतिवादी संख्या 05—08 के पक्ष में बयनामा दिनांक 22.05.2009, 10.10.2012 एवं 20.11.2024 के आधार पर फैसल किये गये नामांतरकरण को निरस्त करवाकर राजस्व रिकार्ड से प्रतिवादी संख्या 05—08 का नाम कलमजन किया जावे।
    3. वादीगण के हिस्सों के अतिरिक्त वादीगण के पिता दुर्गा के हिस्से की भूमि का वादीगण का वादीगण के पिता दुर्गा के प्रथम श्रेणी के वारिसान होने के आधार पर प्रतिवादी संख्या 05—08 के अजनबी क्रेता से पहले खरीदने का अधिकारी होने के कारण प्रतिवादी संख्या 05—08 को स्थायी निषेधाज्ञा के मार्फत निर्देश दिया जावे कि प्रतिवादी संख्या 05—08 उक्त हिस्से की आराजी का बेचान वादीगण के पक्ष में बयनामा निष्पादित करवाये।
    4. वादीगण के पक्ष में एवं प्रतिवादीगण के विरूद्ध स्थाई निषेधाज्ञा जारी की जावे।
    5. वादीगण को प्रतिवादीगण से वाद का खर्चा दिलवाया जावें।
    6. अन्य तनकी।

2. वाद पत्र दर्ज रजिस्टर किया जाकर प्रतिवादीगण को जरिये सम्मन तलब किया गया। प्रकरण में प्रतिवादी संख्या 02, 07—09 असालतन—वकालतन उपस्थित न्यायालय हुए। तत्पश्चात प्रतिवादी संख्या 06 ने वादीगण के दावा का खंडन करते हुए जवाबदावा पेश कर निम्न प्रकार निवेदन कियाः—
    - कि मुतनाजा आराजी में प्रतिवादी संख्या 01 अपने पिता स्व0 गुणेशा के साथ सहदायक के रूप में काश्त करता रहा है। इस प्रकार प्रतिवादी संख्या

01 का जन्म से ही अधिकार निहित हो गये हैं। प्रतिवादी संख्या 01 का अपने पिता के जीवनकाल में ही 1/2 हिस्से के हक निहित हो गये थे। तत्पश्चात् प्रतिवादी संख्या 01 की माता के देहांत होने पर प्रतिवादी संख्या 01 का 1/5 हिस्सा कानूनी निहित होने से प्रतिवादी संख्या 01 का मुतनाजा आराजी में 3/5 हिस्सा खातेदारी का कानूनन है।

- कि वादीनी का वर्तमान राजस्व रिकॉर्ड में 1/10 हिस्सा निहित है। जिसमें किसी प्रकार की त्रुटि कारित नहीं की गई है। इस प्रकार वादीनी द्वारा केवल मनगढत तथ्यों एवं मिथ्या कथनों के आधार पर उक्त वाद पेश किया गया होने से उक्त वाद पोषणीय नहीं है।
- कि प्रतिवादी संख्या 01 द्वारा अपने 3/5 हिस्से में से प्रतिवादी संख्या 06 के पक्ष में बयनामा दिनांक 20.11.2024 निष्पादित करवाया गया है। उक्त बयनामा दिनांक 20.11.2024 में वर्णित आराजी प्रतिवादी संख्या 01 के कानूनन हक हिस्से में आती है। साथ ही मुतनाजा आराजी पर वादीनीगण का कोई कब्जा काश्त नहीं है। बल्कि प्रतिवादी संख्या 06 वक्त खरीद से उक्त आराजी पर काबिज होकर काश्त करता आ रहा है।
- कि प्रतिवादी संख्या 01 द्वारा प्रतिवादी संख्या 06 के पक्ष में निष्पादित बयनामा दिनांक 20.11.2024 प्रतिवादी संख्या 01 के कानूनन हक हिस्से के अनुसार निष्पादित किया होने से उक्त बयनामा में वर्णित आराजी में वादीनी का कोई अधिकार नहीं बनता है। इस प्रकार वादीनी का उक्त वाद काबिल–ए–खारिज है।
- कि वर्तमान राजस्व रिकॉर्ड के अनुसार वादी एवं प्रतिवादी संख्या 04 प्रत्येक का मुतनाजा आराजी में 1/10–1/10 हिस्सा दर्ज रिकॉर्ड होने के आधार पर वादीनी उक्त घोषणा की इश्तदुआ प्राप्त करने की अधिकारिणी नहीं है।
- कि वादीनी का मुतनाजा आराजी पर कोई कब्जा काश्त नहीं होने के आधार पर वादीनी प्रतिवादी संख्या 06 के विरूद्ध स्थाई निषेधाज्ञा प्राप्त करने की अधिकारिणी नहीं है।
- कि प्रतिवादी संख्या 01 द्वारा खसरा संख्या 209 रकबा 0.8579 है0 अर्थात्त 05.06 बीघा भूमि में खातेदार प्रतिवादी संख्या 01 द्वारा अपने 3/5 हिस्से (0.51474) में से 0.32375 है0 भूमि प्रतिवादी संख्या 06 के पक्ष में निष्पादित बयनामा दिनांक 20.11.2024 के अनुसार प्रतिवादी संख्या 06 को 3238/8579 हिस्से का खातेदार घोषित किया जावे। साथ ही बयनामा दिनांक 20.11.2024 में वर्णित आराजी के आधार पर प्रतिवादी संख्या 06 को खातेदार घोषित करने के पश्चात् प्रतिवादी संख्या 06 की आराजी प्रतिवाद के संलग्न प्रस्तुत परिशिष्ट–अ के अनुसार विभाजन किया जावे।
- कि उक्त बयनामा दिनांक 20.11.2024 के अनुसार प्रतिवादी संख्या 06 को खातेदार घोषित करने एवं विभाजन करने के पश्चात् वादी को प्रतिवादी संख्या 06 की पृथक आराजी में दखलअंदाजी नहीं करने बाबत् स्थाई निषेधाज्ञा से पाबंद किया जावे।

3. तत्पश्चात प्रतिवादी संख्या 08 ने वादीगण के दावा का खंडन करते हुए जवाबदावा पेश कर निम्न प्रकार निवेदन कियाः–

- कि प्रतिवादी संख्या 08 मुतनाजा आराजी में क्रेता पक्षकार है। इस हेतु प्रतिवादी संख्या 08 को वादीनी पक्ष की जानकारी नहीं है।
- कि मुतनाजा आराजी मौजा आलपुरा में स्थित है। जिसमें से मूल खसरा संख्या 209 रकबा 12.13 बीघा के मूल खातेदार प्रतिवादी संख्या 01, मीरों पत्नी गुणेशा एवं तगा पुत्र पना के मध्य विभाजन होने से उक्त खसरा संख्या 209 का रकबा 06.06 बीघा प्रतिवादी संख्या 01 एवं मीरोंदेवी के नाम शेष रहा।
- कि उक्त विभाजन के पश्चात् खसरा संख्या 209 रकबा 06.06 बीघा के खातेदार प्रतिवादी संख्या 01 एवं मीरोंदेवी पत्नी गुणेशा द्वारा प्रत्येक के बराबर हिस्से में से प्रतिवादी संख्या 08 के पक्ष में रकबा 01 बीघा का बयनामा दिनांक 10.10.2012 निष्पादित करवाया गया। इस प्रकार उक्त बयनामा मूल खातेदारों द्वारा प्रतिवादी संख्या 08 के पक्ष में निष्पादित करवाया गया।
- कि उक्त बयनामा दिनांक 10.10.2012 के पश्चात् प्रतिवादी संख्या 08 का खसरा विभक्त हो गया एवं प्रतिवादी संख्या 08 वक्त खरीद से अपने अलग खसरे पर काबिज होकर निर्बाध रूप से काश्त करता आ रहा है।
- कि प्रतिवादी संख्या 08 द्वारा मूल खातेदारों से जरिये बयनामा दिनांक 10.10.2012 वैध भूमि खरीद की गई थी। वादीनी द्वारा प्रतिवादी संख्या 08 के विभक्त खसरे पर मनगढ़त तथ्यों एवं मिथ्या आधारों पर उक्त झूठा वाद पेश किया गया है। जो काबिल–ए–खारिज है।
- कि वादीनी द्वारा प्रस्तुत वाद में प्रतिवादी संख्या 08 के विभक्त खसरा संख्या 209 को पृथक एवं यथावत रखा जावे।

4. प्रकरण में वादीगण के वादपत्र एवं प्रतिवादीगण के जबाबदावा के पश्चात् पत्रावली पर निम्नानुसार तनकीयात कायम किये गयेः–

    1. *आया वादी हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम–1956 के तहत गुणेशा पुत्र पना के विधिक वारिश होने के आधार पर मौजा आलपुरा की मुतनाजा आराजी खसरा संख्या 113 में 1/5 हिस्सा, खसरा संख्या 201/1, 201/2 में से 02–05 बीघा तथा खसरा संख्या 209, 209/3 में 1/5 हिस्सा की खातेदारी अधिकारों की घोषणा प्राप्त करने के अधिकारी है।*

       ....वादी

    2. *आया वादी हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम–1956 के तहत गुणेशा पुत्र पना के विधिक वारिश होने के आधार पर मौजा आलपुरा की मुतनाजा आराजी खसरा संख्या 113 में 1/5 हिस्सा, खसरा संख्या 201/1, 201/2 में से 02–05 बीघा तथा खसरा संख्या 209, 209/3 में 1/5 हिस्सा की खातेदारी अधिकारों की घोषणा प्राप्त करने के आधार पर विरूद्ध प्रतिवादी मुताबिक वादपत्र वर्णित अनुतोष स्थायी निषेधाज्ञा प्राप्त करने के अधिकारी है।*

       ....वादी

    3. *आया प्रतिवादी संख्या 06 मुतनाजा आराजी पर प्रतिवादी संख्या 01 द्वारा अपने 3/5 हिस्से में से 02 बीघा भूमि का बेचान जरिये पंजीबद्ध बयनामा दिनांक 20.11.2024 को प्रतिवादी संख्या 06 को करते हुए कब्जा सुपुर्द करने के कारण वादी को उक्त अंतरण की आराजी पर कोई अधिकार नहीं होने के आधार पर खातेदारी*

अधिकारों की घोषणा का अनुतोष पोषणीय नहीं होने तथा उक्त 02 बीघा आराजी पर प्रतिवादी संख्या 06 का सालिम कब्जा होने के कारण स्थायी निषेधाज्ञा का प्रकरण नहीं बनने के कारण काबिल–ए–खारिज है।

............................प्रतिवादी संख्या 06

4. *आया मुतनाजा आराजी पर प्रतिवादी संख्या 01 द्वारा अपने 3/5 हिस्से में से 02 बीघा भूमि का बेचान जरिये पंजीबद्ध बयनामा दिनांक 20.11.2024 को प्रतिवादी संख्या 06 को करते हुए कब्जा सुपुर्द करने के कारण प्रतिवादी संख्या 06 अपने 3238/8579 हिस्से की खातेदारी अधिकारों की घोषणा प्राप्त करने के अधिकारी है।*

............................प्रतिवादी संख्या 06

5. *आया मुतनाजा आराजी पर प्रतिवादी संख्या 01 द्वारा अपने 3/5 हिस्से में से 02 बीघा भूमि का बेचान जरिये पंजीबद्ध बयनामा दिनांक 20.11.2024 को प्रतिवादी संख्या 06 को करते हुए कब्जा सुपुर्द करने के कारण प्रतिवादी संख्या 06 अपने 3238/8579 हिस्से की खातेदारी अधिकारों की घोषणा के पश्चात परिशिष्ट 'अ' के अनुसार विभाजन करवाने के अधिकारी है।*

............................प्रतिवादी संख्या 06

6. *आया मुतनाजा आराजी पर प्रतिवादी संख्या 06 की खातेदारी अधिकारों की घोषणा तथा खाता विभाजन के आधार पर विरूद्ध वादी मुताबिक वादपत्र वर्णित अनुतोष स्थायी निषेधाज्ञा प्राप्त करने के अधिकारी है।*

............................प्रतिवादी संख्या 06

7. *आया मुतनाजा आराजी पर प्रतिवादी संख्या 08 द्वारा दिनांक 10.10.2012 को जरिये पंजीबद्ध बयनामा खसरा संख्या 209/3 में से 1 बीघा भूमि को खरीद करने तथा नामांतरण संख्या 1207 दिनांक 20.10.2012 द्वारा प्रतिवादी संख्या 08 की उक्त 1 बीघा भूमि का अलग से खाता कायम करने के कारण प्रतिवादी संख्या 08 की उक्त 01 बीघा भूमि को मुतनाजा आराजी व डिक्री से पृथक रखा जाना उचित है।*

............................प्रतिवादी संख्या 08

8. *अन्य दादरसी*

...............उभय–पक्षकारान

5. प्रकरण में उक्त प्रकार से कार्यवाही किये जाने पर विचारण आरम्भ किया गया। प्रकरण में वादीगण के वादपत्र एवं प्रतिवादीगण के जबाबदावा के पश्चात् पत्रावली वादीगण साक्ष्य में नियत की गई। प्रकरण में वादीगण द्वारा साक्ष्य स्वरूप निम्न दस्तावेज प्रस्तुत कर प्रदर्श अंकित किए–

दस्तावेज	संवत/विवरण	प्रदर्श
जमाबंदी	खतौनी बंदोबस्त	प्रदर्शपी–01
जमाबंदी	खतौनी बंदोबस्त	प्रदर्शपी–02
नामांतरकरण	नामांतरकरण संख्या 1102	प्रदर्शपी–03
नामांतरकरण	नामांतरकरण संख्या 1195	प्रदर्शपी–04
नामांतरकरण	नामांतरकरण संख्या 335	प्रदर्शपी–05
जमाबंदी	जमाबंदी खसरा संख्या 113/1	प्रदर्शपी–06
जमाबंदी	जमाबंदी खसरा संख्या 201/1	प्रदर्शपी–07

जमाबंदी	जमाबंदी खसरा संख्या 201/2	प्रदर्शपी–08
जमाबंदी	जमाबंदी खसरा संख्या 209/3	प्रदर्शपी–09
जमाबंदी	जमाबंदी खसरा संख्या 209	प्रदर्शपी–10

6. प्रकरण में वादीगण द्वारा साक्ष्य स्वरूप निम्न गवाह प्रस्तुत किए–

नाम	जाति	निवासी	गवाह
भागूकंवर पुत्री गुणेशा पत्नी भटसिंह	राजपूत	आलपुरा	पी0डब्ल्यू–1
सरदारसिंह पुत्र अखसिंह	राजपूत	आलपुरा	पी0डब्ल्यू–2
लखसिंह पुत्र गिरधर सिंह	राजपूत	बारासण	पी0डब्ल्यू–3

7. प्रकरण में भागूकंवर पुत्री गुणेशा पत्नी भटसिंह पी.डब्ल्यू.–01, सरदारसिंह पुत्र अखसिंह पी.डब्ल्यू–02 एवं लखसिंह पुत्र गिरधर सिंह पी.डब्ल्यू–3 द्वारा हलफनामा प्रस्तुत कर समान रूप से निम्न प्रकार कथन किये–

- कि हाल आराजी खसरा संख्या 113/1 रकबा 2.8490 है0, 201/1 रकबा 1.0441 है0, 201/2 रकबा 1.3031 है0, 209 रकबा 0.8579 है0 एवं 209/3 रकबा 0.1619 है0 मौजा आलपुरा तहसील गुड़ामालानी में वादीगण के पूर्वज गुणेशा पुत्र पना के समय की खातेदारी आराजी दर्ज रिकार्ड है।
- कि वादीगण हिन्दू होने के कारण हिन्दू उतराधिकार अधिनियम–1956 से शासित होते है। वादीगण के पिता गुणेशा पुत्र पना के फौत होने पर उनके एक पुत्र चतरसिंह पुत्र गुणेशा एवं चार पुत्रियां चम्पा पुत्री गुणेशा, दरिया पुत्री गुणेशा, पंखी पुत्री गुणेशा एवं भागु पुत्री गुणेशा वारिस हैं। जिनका पूर्वज गुणेशा पुत्र पना की उक्त खातेदारी आराजी में 1/5–1/5 बहिस्सा बराबर के हक अधिकार निहित हैं।
- कि वादीगण अपने पूर्वज गुणेशा पुत्र पना के वारिस होने के कारण अपने पिता के साथ सहदायिकी तथा संयुक्त हिन्दू परिवार के सदस्य होने के कारण उक्त आराजी में जन्म से ही हक निहित होने के कारण अधिकार रखते है। इस स्थिति में उक्त आराजी में वादीगण के पिता गुणेशा पुत्र पना के हिस्से में वादी का 1/5 हिस्सा कानूनन निहित है।
- कि खातेदार गुणेशा पुत्र पना के फौत होने पर गुणेशा पुत्र पना का फौतगी नामांतरकरण गुणेशा पुत्र पना के जायंदा वारिसान पुत्र चतरसिंह पुत्र गुणेशा एवं चार पुत्रियां चम्पा पुत्री गुणेशा, दरिया पुत्री गुणेशा, पंखी पुत्री गुणेशा एवं भागु पुत्री गुणेशा के नाम खोला जाना था। परंतु उक्त नामांतरकरण प्रतिवादी संख्या 01 एवं स्व0 गुणेशा की पत्नी मीरोदेवी के नाम खोला गया। इस प्रकार गुणेशा पुत्र पना की वैध वारिस वादीनीगण को अपने पिता की सम्पत्ति से वंचित रखकर कानूनी भूल की है। साथ अपने हिस्सा अनुसार वादीगण का मौके पर कब्जा काश्त जारी है।
- कि वादग्रस्त आराजी में वादीनी की माता मीरो के देहांत पर फौतगी नामांतरण वादीनी एवं प्रतिवादी संख्या 01–04 के नाम खोला गया। परंतु उक्त नामांतरण में वादीनी का हिस्सा 1/10 अंकित किया गया। जबकि

वादीनी एवं प्रतिवादी संख्या 01–04 का बहिस्सा बराबर 1/5–1/5 निहित था। इस प्रकार स्व0 गुणेशा एवं स्व0 मीरो के फौतगी नामांतरण दर्ज करते समय वादीनी के हक अधिकारों का ध्यान नहीं रखा जाकर गलत नामांतरण पारित किये जाकर वादीनी को अपने पैतृक हक–हिस्से से वंचित रखा गया है।

- कि उक्त आराजी में प्रतिवादीगण संख्या 01 एवं वादीनी की माता मीरो को बिना विभाजन, बिना सहदायकों की सहमति के उत्तरोत्तर बयनामा दिनांक 22.05.2009, 10.10.2012 एवं 20.11.2024 द्वारा प्रतिवादी संख्या 05–08 के पक्ष में बयनामा निष्पादित करवाने का अधिकार नहीं था। उक्त बयनामा में वादीगण के पक्षकार नहीं होने के कारण वादीगण उक्त बयनामा दिनांक 22.05.2009, 10.10.2012 एवं 20.11.2024 से पाबंद व जिम्मेदार नहीं है। इस कारण वादीगण उक्त विवादित बयनामा दिनांक 22.05.2009, 10.10.2012 एवं 20.11.2024 को आरंभ से शून्य, अवैध व निष्प्रभावी घोषित करवाने के अधिकारी है। इस आधार पर वादीगण अपने हिस्से की पैतृक भूमि में घोषणा करवाने के अधिकारी है।
- कि वादीगण एवं प्रतिवादीगण संख्या 01–04 के अपने पूर्वज गुणेशा पुत्र पना के वारिस होने के कारण अपने भाईयों–बहनों के साथ सहदायिकी तथा संयुक्त हिन्दू परिवार के सदस्य होने के कारण उक्त आराजी में जन्म से ही हक निहित होने के कारण अधिकार रखते है। उक्त आराजी पर वादीगण का कब्जा है। एक सहदायक का कब्जा सभी सहदायकों का कब्जा माना जाता है। इस कारण उक्त आराजी में प्रतिवादीगण संख्या 01 एवं वादीनी की माता मीरोंदेवी को बिना विभाजन, बिना सहदायकों की सहमति के बयनामा दिनांक 22.05.2009, 10.10.2012 एवं 20.11.2024 द्वारा प्रतिवादी संख्या 05–08 के पक्ष में बयनामा निष्पादित करवाने का अधिकार नहीं था। प्रतिवादी संख्या 05–08 एक अजनबी क्रेता है। इस प्रकार प्रतिवादी संख्या 05–08 के एक अजनबी क्रेता होने के कारण उक्त आराजी पर कब्जा करने हेतु आमदा है। प्रतिवादी संख्या 05–08 के एक अजनबी क्रेता होने के कारण अवैध रूप से कब्जा प्राप्ति के कारण प्रतिवादी संख्या 05–08 का कब्जा अतिक्रमण माना जाकर प्रतिवादी संख्या 05–08 को अतिक्रमी माना जाएगा।
- कि बयनामा दिनांक 22.05.2009, 10.10.2012 एवं 20.11.2024 में वादीगण के पक्षकार नहीं होने के कारण वादीगण उक्त बयनामा दिनांक 22.05.2009, 10.10.2012 एवं 20.11.2024 से पाबंद व जिम्मेदार नहीं है। इस कारण वादीगण उक्त विवादित बयनामा दिनांक 22.05.2009, 10.10.2012 एवं 20.11.2024 को आरंभ से शून्य, अवैध व निष्प्रभावी घोषित करवाने के अधिकारी है।
- कि प्रतिवादी संख्या 05–08 एक अजनबी क्रेता है। इस प्रकार प्रतिवादी संख्या 05–08 के एक अजनबी क्रेता होने के कारण उक्त आराजी पर कब्जा करने हेतू आमदा है। उक्त आराजी पर वादीगण का कब्जा है। एक सहदायक का कब्जा सभी सहदायकों का कब्जा माना जाता है। इस आधार पर प्रतिवादी संख्या 05–08 के विरूद्ध वादीगण स्थायी निषेधाज्ञा प्राप्त करने के अधिकारी है।

* कि इस हेतु वादी द्वारा पैरा संख्या 05 में अंकित दस्तावेज प्रदर्शित करवाये हैं।

8. प्रकरण में भागूकंवर पुत्री गुणेशा पत्नी भटसिंह पी.डब्ल्यू.–01 ने प्रतिवादी संख्या 02, 07 व 09 की जिरह में मुख्य परीक्षण में अभिकथन किया कि यह कहना सही है कि गुणेशा के एक लड़का चतरसिंह चार लड़कियां चम्पा दरिया पंखी व भागू है। इनकी माता नाम मीरों देवी था। गुणेशा के सभी वारिसों का बराबर हिस्सा है। चम्पा कंवर ने अपने हिस्से तक कोई जमीन बेची है। तो उसकी आपत्ति नही है। चतरसिंह ने अपने हिस्से तक कोई जमीन बेची है। तो उसकी आपत्ति नही है। प्रकरण में पी.डब्ल्यू–01 द्वारा प्रतिवादी संख्या 08 की जिरह में मुख्य परीक्षण में अभिकथन किया कि मेरी उम्र 35 साल है। इस जगह मेरे से पूर्व किसी वकील साहब ने मुझसे कुछ नहीं पूछा था। उक्त जगह पर मै अभी आई हूं। मेरी माता का नाम मीरा देवी है। चतर सिंह गुणेशाराम के पुत्र हैं। मेरा घर सिणधरी में आया हुआ है। मेरा निवास स्थान सिणधरी में है। मुझे गुणेशाराम के फोत होने की साल याद नहीं है। माधोसिंह पुत्र तेजसिंह जी ने उक्त भूमि में से खरीद की हुई है तो मुझे पता नहीं अज खुद कहा उक्त भूमि मेरी माता ने दी है। उक्त भूमि में से चतरसिंह व मीरा ने अपना बराबर हिस्सा बेचान किया हो तो मुझे पता नहीं है। यह कहना सही है कि जो पूर्व में हिस्सा आ रहा था चतरसिंह व मीरा ने अपने हिस्से मे से ही माधोसिंह को जमीन दी है। यह कहना सही है कि चतरसिंह व मीरा ने अपने हिस्से में से 1 बीघा जमीन माधोसिंह को दी है। मैं पढी लिखी नहीं हूं। प्रदर्श–6 में देखकर और सुनकर बताया उक्त जमाबंदी में मेरा नाम भागू कंवर पुत्री गुणेशा जी आया हुआ है तो वह सही है। उक्त पूर्व में मेरा नाम नहीं था मेरी माता फोत हुई तब मेरा नाम आया। मेरी माता की फोत से पूर्व मेरा नाम नहीं था तब मैने यह दावा किया। मै इस दावे मे वादी हूं या प्रतिवादी हूं नहीं बता सकती क्यों कि मैं वादी व प्रतिवादी नहीं समझती हूं। उक्त वाद पत्र में प्रतिवादी पक्षकार कितने हैं मुझे पता नहीं हैं। उक्त दावे में वादी पक्षकार कितने हैं मुझे पता नहीं हैं। उक्त खसरे किस तहसील में आई हुए हैं मुझे पता नही हैं। यह बात सही है कि माधोसिंह का खसरा अलग है। माधोसिंह के और उक्त वाद के खसरे का कोई लेन देना नहीं है। मेरे ससुराल में मेरे 200 बीघा जमीन आई हुई है। उक्त संलग्न दावे के दस्तावेज पर जो प्रदर्श लगाए हैं और जो अंक लगाए हैं वो मैं नहीं बता सकती। उक्त दावा मैने 12 महीने पूर्व लगाया था। दावे के कितने पृष्ठ हैं मुझे पता नहीं हैं। उक्त शपथ पत्र में 2 पृष्ठ हैं। यह शपथ पत्र मेरे वकील साहब ने नहीं लिखाया मैने खुद ने लिखवाया। मैं पढी लिखी नहीं हूं फिर भी मैंने शपथ पत्र लिखवा दिया। मेरे वकील साहब कौन है मुझे पता नहीं है।मेरे साथ में मेरे पति भट सिंह आए हैं। उक्त वाद पत्र में मेरा कितना हिस्सा बताया है मुझे याद नहीं है। उक्त वाद पत्र में हिस्सा मैने खुद ने लिखवाया था। यह कहना सही है कि उक्त न्यायालय में मैं दूसरी बार आई हूं। उक्त दावे के अंदर खसरों के नंबर मुझे याद नहीं है। उक्त दावा 7 बीघा, 8 बीघा, 15–16 बीघा का है। यह बात सही है कि

उक्त वाद पत्र में कही पर भी बीघे लिखा हुआ नहीं है, हैक्टेयर लिखा हुआ है। शपथ पत्र किस तारीख को पेश किया है तारीख मुझे याद नहीं है। शपथ पत्र में क्या लिखा हुआ है मुझे पता नहीं है, मैं अंगूठा छाप हूं। शपथ पत्र मुझे किसी ने पढाया नहीं है। जमाबंदी क्या होती है मुझे पता नहीं है। नामांतरण क्या होता है मुझे पता नहीं है। चंदन पुत्र घमण्ड सिंह को मैं जानती हूं। यह कहना गलत है कि उक्त दावा चंदनसिंह ने करवाया हो अज खुद कहा कि मैने खुद ने किया। यह कहना सही है कि घमण्डसिंह को मैं जानती हूं। दावा मैने किया तब घमण्डसिंह के परिवार वाले मेरे साथ आये थे। घमण्डसिंह, चम्पाकंवर के पति लगते हैं। यह कहना सही है कि जब गुणेशाराम फोत हुए तब चतरसिंह व मीरा के नाम जमीन आई और उसने अपने हिस्से में से तत्काल माधोसिंह पुत्र तेजलसिंह को बेचान कर दी। चतरसिंह व मीरा ने अपने हिस्से में से माधोसिंह से पूर्व किसी को बेचान नहीं की। उक्त जमीन के जितने भी बेचान हुए है प्रतिवादी संख्या–08 माधोसिंह पुत्र तेज सिंह के बाद में बेचान की है। यह कहना गलत है कि मैने झूठा दावा पेश किया है। प्रकरण में पी.डब्ल्यू–01 द्वारा प्रतिवादी संख्या 06 की जिरह प्रतिपरीक्षण में मुख्य परीक्षण में अभिकथन किया कि मै पढी लिखी नही हुॅ अनपढ़ हुॅ। यह कहना गलत है कि बयान देने के लिये पहली बार आई हूँ। मेरे ससुराल सिणधरी मे है। यह कहना गलत है कि मैं सिणधरी में ही रहती हुॅ। अज खुद का मै यहा पर भी रहती हूँ वहां पर भी रहती हूँ। यह कहना सही है कि चतरसिंह एक ही बेटा है। यह कहना सही है कि पन्ना के दो पुत्र है। यह कहना सही है कि पन्ना के दोनो पुत्रों का बटवाडा हो रखा तो मुझे पता नही है। पन्ना कब फौत हुआ मुझे पता नही है। यह कहना सही है कि मीरा व गुणेशा दोनो फौत हो चुके है। मीरा को फौत हुये चार साल व गुणशा कब फौत हुये मुझे पता नही है। यह कहना गलत है कि शपथ पत्र वकील साहब ने लिया और मैने अगुठा किया हो। यह कहना सही है कि शपथ पत्र में क्या लिखा मुझे याद नही है। यह कहना सही है कि गुणेशा को फौत हुये 40 वर्ष हो गये अज मुझको याद नही है।

प्रश्नः– चतरसिंह और आप लडे हुये हो?

उत्तरः– गवाह चुप रहा।

प्रश्नः– क्या गुणेशा के परिवार में लेन–देन चतरसिंह ही करता है यह बात सही ?

उत्तरः– यह कहना सही है।

यह कहना सही है कि आसु पुत्र भारताराम को दो बीघा जमीन का बेचान चतरसिंह ने किया है। यह कहना सही कि चतरसिंह ने दो बीघा का बेचान किया उसके आसुराम कि कमरा बना हुआ है। यह कहना सही है कि उसमें निवास करते है। यह कहना सही कि बेचान किया उसके अलावा और भी जमीन है।

9. प्रकरण में सरदारसिंह पुत्र अखसिंह पी.डब्ल्यू–02 ने प्रतिवादी की जिरह में मुख्य परीक्षण में अभिकथन किया कि यह कहना सही है कि गुणेशा के एक लड़का चतरसिंह चार लड़कियां चम्पा दरिया पंखी व भागू है। इनकी माता नाम मीरों देवी था। गुणेशा के सभी वारिसों का बराबर हिस्सा है। चम्पा कंवर ने अपने हिस्से तक कोई जमीन बेची है। तो उसकी आपत्ति नही है। चतरसिंह ने अपने हिस्से तक

कोई जमीन बेची है। तो उसकी आपत्ति नही है। प्रकरण में पी.डब्ल्यू–02 ने प्रतिवादी संख्या 06 यह कहना सही है कि मै सरदार हूँ। यह कहना गलत है कि सरदार केवल पजाब मे रहते है अज खुद कहा मारवाड़ मे भी सरदार रहते है। यह कहना सही है कि मुझे मेरे खेत के खसरा नम्बर याद नही है। यह कहना सही है कि पाड़ोसी के मुझे खसरा नम्बर याद नही है। यह बात गलत है कि शपथ पत्र में खसरा न. वकील साहब ने लिखाया हो अज खुद का लिखाया तो मैने था अब मुझे याद नही हैं। यह कहना गलत है मुझे भाबु कंवर ने मुझे खसरा नम्बर लिखाया हो। यह कहना गलत है कि आज से तीन साल पहले मेरे और चतरसिंह के लड़ाई झगडे हुये। यह कहना गलत है कि चतरसिंह और मेरे बीच में झगड़ा हुआ हो जिसकि पंचायती रखी हो जिसमे मै नही गया हूँ। यह कहना गलत उक्त दुश्मनी निकालने के लिये आज कोर्ट मे बयान देने आया हुं। गुणेशा कब फौत हुआ मुझे याद नही है। यह कहना सही है कि गुणेशा के परिवार में करता धरता चतरसिंह ही है। यह कहना सही है कि चतरसिंह अपनी बहनो के मोमेरा व अपनी बेटीयो के शादी के लिये जमीन का बेचान किया है तो मुझ पता नही है।

10. प्रकरण में लखसिंह पुत्र गिरधर सिंह पी.डब्ल्यू–03 ने प्रतिवादी संख्या 02, 07 व 09 की जिरह में मुख्य परीक्षण में अभिकथन किया कि यह कहना सही है कि गुणेशा के एक लड़का चतरसिंह चार लड़कियां चम्पा दरिया पंखी व भागू है। इनकी माता नाम मीरों देवी था। गुणेशा के सभी वारिसों का बराबर हिस्सा है। चम्पा कंवर ने अपने हिस्से तक कोई जमीन बेची है। तो उसकी आपत्ति नही है। चतरसिंह ने अपने हिस्से तक कोई जमीन बेची है। तो उसकी आपत्ति नही है। प्रकरण में लखसिंह पुत्र गिरधर सिंह पी.डब्ल्यू–03 ने प्रतिवादी संख्या 06 की जिरह में मुख्य परीक्षण में अभिकथन किया कि यह बात सही है कि मेरा गॉव रोली है। अज खुद काहा मेरा गॉव बारासण है। यह कहना गलत है कि मेरे चतरसिह के आपस में नही बनती हो। यह कहना सही है कि चतरसिह और मेरे अच्छी दोस्ती है। यह कहना सही इसलिये मैं यहा बयान देने आया हुं। यह कहना गलत है कि आज पहली बार आया हुं। यह कहना सही है कि गुणेशा के परिवार में चतरसिंह ही करता धरता है। ये कहना सही है कि चतरसिंह ने 2 बीघा जमीन बेची है।
प्रश्नः– यह कहना सही है कि आसु कमरा बना के रहता, उसमें निवास करता है?
उत्तरः–आसु कमरा बना के रहता है, यह मैने नही देखा अभी दो महीने मै नही गया अभी रहता हो तो मुझे पता नही ।
यह कहना गलत है कि शपथ पत्र वकील साहब ने लिखाया हो । शपथ पत्र मे क्या लिखाया मुझे याद नही है। यह बात सही है कि गुणेशा को फौत हुये 40 वर्ष हो गये। और यह कहना सही है कि मीरा को फौत हुये लगभग 25 वर्ष हो गये।यह कहना गलत है कि मै जमीन दिलाने के लिये व चतरसिंह से मेरी नही बनने के कारण आज कोट में झूटे बयान दे रहा हूँ।

11. प्रकरण में वादीगण साक्ष्य के पश्चात् पत्रावली प्रतिवादी साक्ष्य में नियत की गई। प्रतिवादीगण द्वारा साक्ष्य स्वरूप निम्नलिखित दस्तावेज प्रस्तुत किये गयेः–

दस्तावेज	संवत / विवरण	प्रदर्श
जमाबंदी	जमाबंदी मौजा आलपुरा सम्वंत 2076–2079 खसरा संख्या 209 / 3	प्रदर्श–01 (प्रतिवादी संख्या 08)

नामांतरण	माधोसिंह की खरीद का नामांतरण संख्या 1300/2012 मौजा आलपुरा की प्रमाणित प्रतिलिपि	प्रदर्श–02 (प्रतिवादी संख्या 08)
नक्शा	नजरी नक्शा खसरा संख्या 209/3 मौजा आलपुरा की प्रमाणित प्रति	प्रदर्श–03 (प्रतिवादी संख्या 08)
बयनामा	बेचान दस्तावेज सं. 2012002046 दिनांक 10.10.2012 प्रतिवादी सं. 08 द्वारा खरीद की गई भूमि की मूल की फोटोप्रति	प्रदर्श–04 (प्रतिवादी संख्या 08)
बयनामा	बेचान दस्तावेज सं. 2012002046 दिनांक 10.10.2012 प्रतिवादी सं. 08 द्वारा खरीद की गई भूमि की मूल प्रति	प्रदर्श–04ए (प्रतिवादी संख्या 08)
जमाबंदी	जमाबंदी खसरा संख्या 209	प्रदर्श–01 (डी–06)
नक्शा	वर्तमान नक्शा ख.सं. 209	प्रदर्श–02 (डी–06)
–	आधार कार्ड आसुराम पुत्र भारताराम	प्रदर्श–03 (डी–06)
बयनामा	बेचान दस्तावेज सं. 202401092003518 दिनांक 20.11.2024 की प्रमाणित प्रतिलिपि	प्रदर्श–04 (डी–06)

12. प्रकरण में प्रतिवादीगण द्वारा साक्ष्य स्वरूप निम्न गवाह प्रस्तुत किए–

नाम	जाति	निवासी	गवाह
माधोसिंह पुत्र तेजसिंह	राजपूत	जीवाणियों की ढाणी	डी0 डब्ल्यू–1
लुणसिंह पुत्र भंवरसिंह	राजपूत	जीवाणियों की ढाणी	डी0 डब्ल्यू–2
आसुराम पुत्र भारताराम	विश्नोई	आलपुरा	डी0 डब्ल्यू–3
जसाराम पुत्र ओखाराम	देवासी	आलपुरा	डी0 डब्ल्यू–4

13. प्रकरण में द्वारा साक्ष्य केवल साक्ष्य शपथ पत्र प्रस्तुत किया गया। प्रकरण में माधोसिंह पुत्र तेजसिंह डी0डब्ल्यू0–01 एवं लुणसिंह पुत्र भंवरसिंह डी0 डब्ल्यू–2 द्वारा प्रतिवादी संख्या 08 की ओर से चीफ प्रस्तुत कर कथन किया कि–

- कि प्रतिवादी संख्या 08 मुतनाजा आराजी में क्रेता पक्षकार है। इस हेतु प्रतिवादी संख्या 08 को वादीनी पक्ष की जानकारी नहीं है।
- कि मुतनाजा आराजी मौजा आलपुरा में स्थित है। जिसमें से मूल खसरा संख्या 209 रकबा 12.13 बीघा के मूल खातेदार प्रतिवादी संख्या 01, मीरों पत्नी गुणेशा एवं तगा पुत्र पना के मध्य विभाजन होने से उक्त खसरा संख्या 209 का रकबा 06.06 बीघा प्रतिवादी संख्या 01 एवं मीरोंदेवी के नाम शेष रहा।
- कि उक्त विभाजन के पश्चात् खसरा संख्या 209 रकबा 06.06 बीघा के खातेदार प्रतिवादी संख्या 01 एवं मीरोंदेवी पत्नी गुणेशा द्वारा प्रत्येक के बराबर हिस्से में से प्रतिवादी संख्या 08 के पक्ष में रकबा 01 बीघा का बयनामा दिनांक 10.10.2012 निष्पादित करवाया गया। इस प्रकार उक्त

बयनामा मूल खातेदारों द्वारा प्रतिवादी संख्या 08 के पक्ष में निष्पादित करवाया गया।

- कि उक्त बयनामा दिनांक 10.10.2012 के पश्चात् प्रतिवादी संख्या 08 का खसरा विभक्त हो गया एवं प्रतिवादी संख्या 08 वक्त खरीद से अपने अलग खसरे पर काबिज होकर निर्बाध रूप से काश्त करता आ रहा है।
- कि प्रतिवादी संख्या 08 द्वारा मूल खातेदारों से जरिये बयनामा दिनांक 10.10.2012 वैध भूमि खरीद की गई थी। वादीनी द्वारा प्रतिवादी संख्या 08 के विभक्त खसरे पर मनगढत तथ्यों एवं मिथ्या आधारों पर उक्त झूठा वाद पेश किया गया है। जो काबिल–ए–खारिज है।
- कि वादीनी द्वारा प्रस्तुत वाद में प्रतिवादी संख्या 08 के विभक्त खसरा संख्या 209 को पृथक एवं यथावत रखा जावे।
- इस हेतु प्रतिवादी संख्या 08 द्वारा पैरा संख्या 11 में अंकित दस्तावेज में प्रदर्श–01 (प्रतिवादी संख्या 08) से प्रदर्श–04 (प्रतिवादी संख्या 08) एवं प्रदर्श–04ए (प्रतिवादी संख्या 08) प्रदर्शित करवाये हैं।

14. प्रकरण में माधोसिंह पुत्र तेजसिंह डी0डब्ल्यू0–01 से वादी की जिरह में मुख्य परीक्षण में निम्न प्रकार अभिकथन किया कि मैं आज जिस फाईल में गवाही देने आया हूं उस फाइल में खसरा संख्या 209 व 209/3 का दावा है। यह कहना सही है कि गणशा जी दो भाई हैं। गणेशा जी के नाम कितने बीघा जमीन है मुझे पता नहीं है। मीरा, चतरसिंह की मां है। मीरा फोत हो चुकी है। मीरी फोत होने पर उसका नामांतरण चतरसिंह, चम्पा कंवर, दरिया, भागू कंवर के नाम से भरा गया था। गुणेशा जी के लडके–लडकी कितने हैं मुझे पता नहीं है।मीरा कंवर फोत हुइ तब मै चतरसिंह के घर नहीं गया। मैने जब जमीन खरीदी तब बंटवारा किया हुआ था या नहीं मुझे पता नहीं है। गणेशा जी की जमीन पर चतरसिंह व पंखी कंवर, भागू कंवर काश्त करती थी तो मुझे पता नहीं। मेरी जमीन की तरमीम की तब गुणेशा जी की पुत्री की सहमती ली गई है तो मुझे पता नही है, काफी समय हो गया है। सहमती हेतु गुणेशा जी की पुत्रियों के पास मैं नहीं गया।

15. प्रकरण में द्वारा साक्ष्य केवल साक्ष्य शपथ पत्र प्रस्तुत किया गया। प्रकरण में आसुराम पुत्र भारताराम डी0डब्ल्यू0–03 एवं जसाराम पुत्र ओखराम डी0 डब्ल्यू–4 द्वारा प्रतिवादी संख्या 06 की ओर से चीफ प्रस्तुत कर कथन किया कि–

- कि कि मुतनाजा आराजी में प्रतिवादी संख्या 01 अपने पिता स्व0 गुणेशा के साथ सहदायक के रूप में काश्त करता रहा है। इस प्रकार प्रतिवादी संख्या 01 का जन्म से ही अधिकार निहित हो गये हैं। प्रतिवादी संख्या 01 का अपने पिता के जीवनकाल में ही 1/2 हिस्से के हक निहित हो गये थे। तत्पश्चात् प्रतिवादी संख्या 01 की माता के देहांत होने पर प्रतिवादी संख्या 01 का 1/5 हिस्सा कानूनी निहित होने से प्रतिवादी संख्या 01 का मुतनाजा आराजी में 3/5 हिस्सा खातेदारी का कानूनन है।
- कि वादीनी का वर्तमान राजस्व रिकॉर्ड में 1/10 हिस्सा निहित है। जिसमें किसी प्रकार की त्रुटि कारित नहीं की गई है। इस प्रकार वादीनी द्वारा केवल मनगढत तथ्यों एवं मिथ्या कथनों के आधार पर उक्त वाद पेश किया गया होने से उक्त वाद पोषणीय नहीं है।

- कि प्रतिवादी संख्या 01 द्वारा अपने 3/5 हिस्से में से प्रतिवादी संख्या 06 के पक्ष में बयनामा दिनांक 20.11.2024 निष्पादित करवाया गया है। उक्त बयनामा दिनांक 20.11.2024 में वर्णित आराजी प्रतिवादी संख्या 01 के कानूनन हक हिस्से में आती है। साथ ही मुतनाजा आराजी पर वादीनीगण का कोई कब्जा काश्त नहीं है। बल्कि प्रतिवादी संख्या 06 वक्त खरीद से उक्त आराजी पर काबिज होकर काश्त करता आ रहा है।
- कि प्रतिवादी संख्या 01 द्वारा प्रतिवादी संख्या 06 के पक्ष में निष्पादित बयनामा दिनांक 20.11.2024 प्रतिवादी संख्या 01 के कानूनन हक हिस्से के अनुसार निष्पादित किया होने से उक्त बयनामा में वर्णित आराजी में वादीनी का कोई अधिकार नहीं बनता है। इस प्रकार वादीनी का उक्त वाद काबिल–ए–खारिज है।
- कि वर्तमान राजस्व रिकॉर्ड के अनुसार वादी एवं प्रतिवादी संख्या 04 प्रत्येक का मुतनाजा आराजी में 1/10–1/10 हिस्सा दर्ज रिकॉर्ड होने के आधार पर वादीनी उक्त घोषणा की इश्तदुआ प्राप्त करने की अधिकारिणी नहीं है।
- कि वादीनी का मुतनाजा आराजी पर कोई कब्जा काश्त नहीं होने के आधार पर वादीनी प्रतिवादी संख्या 06 के विरूद्ध स्थाई निषेधाज्ञा प्राप्त करने की अधिकारिणी नहीं है।
- कि प्रतिवादी संख्या 01 द्वारा खसरा संख्या 209 रकबा 0.8579 है0 अर्थात्त 05.06 बीघा भूमि में खातेदार प्रतिवादी संख्या 01 द्वारा अपने 3/5 हिस्से (0.51474) में से 0.32375 है0 भूमि प्रतिवादी संख्या 06 के पक्ष में निष्पादित बयनामा दिनांक 20.11.2024 के अनुसार प्रतिवादी संख्या 06 को 3238/8579 हिस्से का खातेदार घोषित किया जावे। साथ ही बयनामा दिनांक 20.11.2024 में वर्णित आराजी के आधार पर प्रतिवादी संख्या 06 को खातेदार घोषित करने के पश्चात् प्रतिवादी संख्या 06 की आराजी प्रतिवाद के संलग्न प्रस्तुत परिशिष्ट–अ के अनुसार विभाजन किया जावे।
- कि उक्त बयनामा दिनांक 20.11.2024 के अनुसार प्रतिवादी संख्या 06 को खातेदार घोषित करने एवं विभाजन करने के पश्चात् वादी को प्रतिवादी संख्या 06 की पृथक आराजी में दखलअंदाजी नहीं करने बाबत् स्थाई निषेधाज्ञा से पाबंद किया जावे।
- कि इस हेतु प्रतिवादी संख्या 06 द्वारा पैरा संख्या 11 में अंकित दस्तावेज प्रदर्श–01 (डी–06) से प्रदर्श–04 (डी–06) प्रदर्शित करवाये हैं।

16. प्रकरण में आसुराम पुत्र भारताराम डी0डब्ल्यू0–03 से वादी की जिरह में मुख्य परीक्षण में निम्न प्रकार अभिकथन किया कि शपथ पत्र कितने महीने पहले पेश किया था, मुझे पता नहीं है। मुझे मेरे खेत के खसरा संख्या याद नहीं है। मैं आलपुरा वाले खेत के बयान देने आया हूं। मेरे खरीदशुदा खेत में चतरसिंह पुत्र गुणेशा, चन्दन सिंह पुत्र घमण्ड सिंह पंखी पुत्री गुणेशा, बाबूलाल पुत्र भींयाराम, भागू

कंवर पुत्री गुणेशा मेरे सहखातेदार हैं। मीरा, चतरसिंह की माता है तो मुझे पता नहीं। गुणेशा कब फोत हुआ व उसका म्यूटेशन कब भरा मुझे पता नहीं है। मुझे पहले पता नहीं था कि चतरसिंह की बहिने भी हैं। अब मुझे पता चला कि चतरसिंह की बहिने हैं जिन्होने दावा पेश किया है। मेरे सहखातेदार भागु कंवर व पंखी चतरसिंह की बहिने हैं तो मैं उसे नहीं पहचानता।मेरे सहखातेदार चन्दनसिंह, पंखी, बाबूलाल, भागूकंवर काश्त नहीं करते हैं। इनकी जमीन पर कौन काश्त करता है मुझे पता नहीं। चतरसिंह, चम्पा, दरिया, पंखीव भागू गणेशा जी की पुत्री है। यदि गणेशा की जमीन पर इनका बराबर हिस्सा है तो मुझे पता नहीं है। मुझे चतरसिंह द्वारा मुझे बेचान की गई भूमि बंट से अधिक बेचान की गई है तो मुझे पता नहीं है। यह कहना गलत है कि रजिस्ट्री करवाई तब जसाराम पुत्र ओखाराम मेरे साथ में नहीं है। यह कहना सही है कि रजिस्ट्री में जसाराम पुत्र ओखाराम की शाख व पहचान नहीं है।

17. प्रकरण में जसाराम पुत्र ओखराम डी0डब्ल्यू0–04 से वादी की जिरह में मुख्य परीक्षण में निम्न प्रकार अभिकथन किया कि यह कहना सही है कि शपथ पत्र आसुराम लिखवाकर लाया था। शपथ पत्र किस तारीख को लिखा था मुझे पता है। शपथ पत्र 14.05.2026 को लिखवाया था। मैं जिस खेत की गवाही देने आया हुं उसके खसरा संख्या याद नहीं हैं। यह खेत 11–12 बीघा का है, अज खुद कहा कि 5 बीघा का है। यह खेत चतरसिंह के नाम है। इस खेत में चतरसिंह की बहिने भागू कंवर व पंखी का भी नाम है।मीरा इनकी माता थी तो मुझे पता नहीं है।इस शपथ पत्र में क्या लिखा हुआ है मुझे पता नहीं है। आसुराम ने जब जमीन खरीदी तब मै साथ में नहीं था। मेरे को आसुराम ने गवाही देने का कहा तब मैं आया। गुणेशा जी की लडकियां है, पर मुझे नाम पता नहीं। जमीन खरीदी उस खसरे की जमाबंदी देखने का काम नहीं पडा।

18. पत्रावली पर विद्वान अधिवक्ता उभयपक्षकारान की बहस सुनी गई। दौराने बहस विद्वान अधिवक्ता वादी द्वारा निम्न प्रकार निवेदन कियाः–

- कि उक्त आराजी में वादीगण के पिता गुणेशा पुत्र पना के हिस्से में प्रत्येक वादी का 1/5 हिस्सा घोषित किया जाकर सहखातेदार घोषित किया जावे।
- वादीगण के हक हिस्से में से प्रतिवादी संख्या 01 एवं माता मीरोंदेवी द्वारा प्रतिवादी संख्या 05–08 के पक्ष में निष्पादित बयनामा दिनांक 22.05.2009, 10.10.2012 एवं 20.11.2024 वादीगण के अधिकारों के प्रति आरंभ से शून्य, अवैध व निष्प्रभावी घोषित किया जाकर प्रतिवादी संख्या 05–08 के पक्ष में बयनामा दिनांक 22.05.2009, 10.10.2012 एवं 20.11.2024 के आधार पर फैसल किये गये नामांतरकरण को निरस्त करवाकर राजस्व रिकार्ड से प्रतिवादी संख्या 05–08 का नाम कलमजन किया जावे।
- वादीगण के हिस्सों के अतिरिक्त वादीगण के पिता दुर्गा के हिस्से की भूमि का वादीगण का वादीगण के पिता दुर्गा के प्रथम श्रेणी के वारिसान होने के आधार पर प्रतिवादी संख्या 05–08 के अजनबी क्रेता से पहले खरीदने का अधिकारी होने के कारण प्रतिवादी संख्या 05–08 को स्थायी निषेधाज्ञा के मार्फत निर्देश दिया जावे कि प्रतिवादी संख्या

05–08 उक्त हिस्से की आराजी का बेचान वादीगण के पक्ष में बयनामा निष्पादित करवाये।

- वादीगण के पक्ष में एवं प्रतिवादीगण के विरूद्ध स्थाई निषेधाज्ञा जारी की जावे।
- वादीगण को प्रतिवादीगण से वाद का खर्चा दिलवाया जावें।

19. पत्रावली पर दौराने बहस विद्वान अधिवक्ता प्रतिवादी संख्या 06 द्वारा दौरान–ए–बहस बहस निम्न प्रकार निवेदन कियाः–

- कि प्रतिवादी संख्या 01 द्वारा खसरा संख्या 209 रकबा 0.8579 है0 अर्थात्त 05.06 बीघा भूमि में खातेदार प्रतिवादी संख्या 01 द्वारा अपने 3/5 हिस्से (0.51474) में से 0.32375 है0 भूमि प्रतिवादी संख्या 06 के पक्ष में निष्पादित बयनामा दिनांक 20.11.2024 के अनुसार प्रतिवादी संख्या 06 को 3238/8579 हिस्से का खातेदार घोषित किया जावे। साथ ही विभाजन का अनुतोष प्रत्याहारित किया जाता है।
- कि उक्त बयनामा दिनांक 20.11.2024 के अनुसार प्रतिवादी संख्या 06 को खातेदार घोषित करने के पश्चात् वादी को प्रतिवादी संख्या 06 की पृथक आराजी में दखलअंदाजी नहीं करने बाबत् स्थाई निषेधाज्ञा से पाबंद किया जावे।

20. तत्पश्चात पत्रावली पर दौराने बहस विद्वान अधिवक्ता प्रतिवादी संख्या 08 द्वारा दौरान–ए–बहस निम्न प्रकार निवेदन कियाः–

- कि वादीनी द्वारा प्रस्तुत वाद में प्रतिवादी संख्या 08 के विभक्त खसरा संख्या 209 को पृथक एवं यथावत रखा जावे।

21. मैनें विद्वान अधिवक्ता उभयपक्षकारान की बहस पर मनन किया गया एवं पत्रावली पर संलग्न दस्तावेजात् का ध्यानपूर्वक अवलोकन किया गया। अब प्रकरण का तनकीवार विश्लेषण किया जाना अपेक्षित है। इस संबंध में सर्वप्रथम तनकी संख्या 01 के संबंध में विश्लेषण किया जाना अपेक्षित है। प्रकरण में तनकी संख्या 01 निम्न प्रकार हैः–

1. आया वादी हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम–1956 के तहत गुणेशा पुत्र पना के विधिक वारिश होने के आधार पर मौजा आलपुरा की मुतनाजा आराजी खसरा संख्या 113 में 1/5 हिस्सा, खसरा संख्या 201/1, 201/2 में से 02–05 बीघा तथा खसरा संख्या 209, 209/3 में 1/5 हिस्सा की खातेदारी अधिकारों की घोषणा प्राप्त करने के अधिकारी है।
............................वादी

22. प्रकरण में तनकी संख्या 01 को साबित करने का भार वादी पर है। प्रकरण में वादी द्वारा अपने को स्व0 गुणेशा की विधिक वारिस बताते हुए स्व0 गुणेशा की खातेदारी आराजी में अपने कानूनन हिस्से की खातेदारी घोषणा हेतु दावा प्रस्तुत किया है। साथ ही विवाद का दूसरा बिन्दु है कि प्रतिवादी संख्या 01 एवं वादी व प्रतिवादी

संख्या 01—04 की माता मीरोंदेवी द्वारा मुतनाजा आराजी में से कुछ आराजी का प्रतिवादी संख्या 05—08 को किया गया बैचान विधिसंगत है अथवा नहीं। इस प्रकार वादी के दावे का मुख्य आधार यह है कि वादी, स्व0 गुणेशा की विधिक वारिस है। इस प्रकार उक्त तनकी में निम्न कानूनी बिन्दुओं पर विश्लेषण किया जाना अपेक्षित है:—

1. *वादी का गुणेशा की विधिक वारिस होना।*
2. *वादी का गुणेशा की विरासत में अधिकार निहित होना।*

23. प्रकरण में उक्त तनकी पर अग्रिम विश्लेषण से पूर्व सिविल मामलों में संबंधित पक्षों के दावे व खण्डन के संबंध में साबित करने के भार के संबंध में कानूनी स्थिति का अवलोकन किया जाना अपेक्षित है। इस संबंध में भारतीय साक्ष्य अधिनियम—2023 के प्रासंगिक प्रावधानों का विश्लेषण किया जाना अपेक्षित है। इस प्रकार भारतीय साक्ष्य अधिनियम—2023 के प्रासंगिक प्रावधानों का उद्धरण निम्न प्रकार है—

OF THE BURDEN OF PROOF

***104. Burden of proof**.—Whoever desires any Court to give judgment as to any legal right or liability dependent on the existence of facts which he asserts must prove that those facts exist, and when a person is bound to prove the existence of any fact, it is said that the burden of proof lies on that person.*

Illustrations.

(a) A desires a Court to give judgment that B shall be punished for a crime which A says B has committed. A must prove that B has committed the crime.

(b) A desires a Court to give judgment that he is entitled to certain land in the possession of B, by reason of facts which he asserts, and which B denies, to be true. A must prove the existence of those facts.

***105. On whom burden of proof lies**.—The burden of proof in a suit or proceeding lies on that person who would fail if no evidence at all were given on either side.*

Illustrations.

(a) A sues B for land of which B is in possession, and which, as A asserts, was left to A by the will of C, B's father. If no evidence were given on either side, B would be entitled to retain his possession. Therefore, the burden of proof is on A.

(b) A sues B for money due on a bond. The execution of the bond is admitted, but B says that it was obtained by fraud, which A denies. If no evidence were given on either side, A would succeed, as the bond is not disputed and the fraud is not proved. Therefore, the burden of proof is on B.

***106. Burden of proof as to particular fact**.—The burden of proof as to any particular fact lies on that person who wishes the Court to believe*

in its existence, unless it is provided by any law that the proof of that fact shall lie on any particular person.

Illustration.

A prosecutes B for theft, and wishes the Court to believe that B admitted the theft to C. A must prove the admission. B wishes the Court to believe that, at the time in question, he was elsewhere. He must prove it.

107. Burden of proving fact to be proved to make evidence admissible*.—The burden of proving any fact necessary to be proved in order to enable any person to give evidence of any other fact is on the person who wishes to give such evidence.*

llustrations.

(a) A wishes to prove a dying declaration by B. A must prove B's death.

(b) A wishes to prove, by secondary evidence, the contents of a lost document. A must prove that the document has been lost.

24. इस संबंध में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा सिविल अपील संख्या 2413/2006 उनवान में निर्णय दिनांक 02.05.2006 में साक्ष्य अधिनियम–1887 के प्रासंगिक प्रावधानों की विवेचना करते हुए किसी दावे में साबित करने के भार के बारे में विस्तृत विवेचना करते हुए न्यायिक दृष्टांत प्रतिपादित किया है। उक्त न्यायिक दृष्टांत के प्रासंगिक विवेचन का उद्धरण निम्न प्रकार है–

The initial burden of proof would be on the plaintiff in view of Section 101 of the Evidence Act, which reads as under:-

> *"Sec. 101. Burden of proof.- Whoever desires any Court to give judgment as to any legal right or liability dependent on the existence of facts which he asserts, must prove that those facts exist.*
>
> *When a person is bound to prove the existence of any fact, it is said that the burden of proof lies on that person."*

In terms of the said provision, the burden of proving the fact rests on the party who substantially asserts the affirmative issues and not the party who denies it. The said rule may not be universal in its application and there may be exception thereto.....

Pleading is not evidence, far less proof. Issues are raised on the basis of the pleadings. The defendant-appellant having not admitted or acknowledged the fiduciary relationship between the parties, indisputably, the relationship between the parties itself would be an issue. The suit will fail if both the parties do not adduce any evidence, in view of Section 102 of the Evidence Act. Thus, ordinarily, the burden of proof would be on the party who asserts the affirmative of the issue and it rests, after evidence is gone into, upon the party against whom, at the time the question arises, judgment would be given, if no further evidence were to be adduced by either side.

xxx

There is another aspect of the matter which should be borne in mind. A distinction exists between a burden of proof and onus of proof. The right to begin follows onus probandi. It assumes importance in the early stage of a case. The question of onus of proof has greater force, where the question is which party is to begin. Burden of proof is used in three ways : (i) to indicate the duty of bringing forward evidence in support of a proposition at the beginning or later; (ii) to make that of establishing a proposition as against all counter evidence; and (iii) an indiscriminate use in which it may mean either or both of the others. The elementary rule is Section 101 is inflexible. In terms of Section 102 the initial onus is always on the plaintiff and if he discharges that onus and makes out a case which entitles him to a relief, the onus shifts to the defendant to prove those circumstances, if any, which would disentitle the plaintiff to the same.

In R.V.E. Venkatachala Gounder v. Arulmigu Viswesaraswami & V.P. Temple and Anr., the law is stated in the following terms :

> *"29. In a suit for recovery of possession based on title it is for the plaintiff to prove his title and satisfy the court that he, in law, is entitled to dispossess the defendant from his possession over the suit property and for the possession to be restored to him. However, as held in A. Raghavamma v. A. Chenchamma there is an essential distinction between burden of proof and onus of proof:*
>
> *burden of proof lies upon a person who has to prove the fact and which never shifts. Onus of proof shifts. Such a shifting of onus is a continuous process in the evaluation of evidence. In our opinion, in a suit for possession based on title once the plaintiff has been able to create a high degree of probability so as to shift the onus on the defendant it is for the defendant to discharge his onus and in the absence thereof the burden of proof lying on the plaintiff shall be held to have been discharged so as to amount to proof of the plaintiff's title."*

25. प्रकरण में भारतीय साक्ष्य अधिनियम–2023 के प्रासंगिक प्रावधानों तथा उक्त न्यायिक दृष्टांत का अवलोकन करने पर कानूनी स्थिति स्पष्ट होती है कि जहां आपराधिक प्रकरणों में निर्णयन संदेहरहित प्रमाणन के आधार पर किया जाता है। वही सिविल प्रकृति के मामलों में संभावनाओं की प्रबलता/प्रधानता के आधार पर निर्णयन किया जाता है। साथ ही यह भी कानूनी स्थिति है कि दावे के अभिवचन साक्ष्य नहीं होते है। दावाकर्त्ता व्यक्ति को अपने दावे के समर्थन में पृथक से साक्ष्य प्रस्तुत करते हुए अपने दावे के तथ्य को साबित करने का दायित्व होता है।

26. इसके साथ ही यह भी कानूनी स्थिति स्पष्ट होती है कि सबूत का भार (Burden of Proof) तथा प्रमाण का भार (Onus of Proof) में अंतर है। किसी सिविल दावे में सबूत का भार (Burden of Proof) प्रमुखतः वादी पर होता है। सबूत का भार (Burden of Proof) स्थानांतरित नहीं होता है। जबकि प्रमाण का भार (Onus of Proof) स्थानांतरित होता है। किसी सिविल दावे में किसी तथ्य को साबित करने का भार

(Burden of Proof) उस तथ्य के आधार पर दावा करने वाले व्यक्ति पर होता है। जब किसी तथ्य को किसी व्यक्ति द्वारा प्रमाण का भार (Onus of Proof) पूर्ण करते हुए साबित करने का दायित्व पूर्ण किया जाता है तो प्रमाण का भार (Onus of Proof) प्रतिद्वंदी पर आ जाता है। अब प्रतिद्वंदी को उक्त तथ्य विशेष के खण्डन हेतु साबित करने का भार (Onus of Proof) होने के कारण अगर प्रमाण प्रस्तुत करते हुए प्रमाणन का भार (Onus of Proof) पूर्ण किया जाता है तो प्रमाण का भार (Onus of Proof) वापस स्थानांतरित हो जाता है। इस प्रकार प्रमाण का भार (Onus of Proof) स्थानांतरित होता रहता है। यह एक अनवरत प्रक्रिया है। जो व्यक्ति प्रमाणन का भार (Onus of Proof) का दायित्व पूर्ण करने में असफल रहता है उसके विरूद्ध उक्त तथ्य को साबित माना जाता है।

27. इस प्रकार उक्त कानूनी स्थिति के संदर्भ में प्रकरण के तथ्यों का तनकी में निहित प्रथम बिन्दु पर विश्लेषण किया जाना अपेक्षित है। प्रकरण का अवलोकन करने पर ज्ञात होता है कि वादी के दावे का मुख्य आधार यह है कि वादी, स्व0 गुणेशा की विधिक वारिस है। इस संबंध में उक्त तथ्य को साबित करने का भार वादी पर है। इस संबंध में वादी द्वारा अपने दावे के अभिवचन में उल्लेखित किया है कि स्व0 गुणेशा की विधिक वारिस वादी है। यहां उल्लेखनीय है कि कानूनी स्थिति है कि दावे के अभिवचन साक्ष्य नहीं होते है। दावाकर्त्ता व्यक्ति को अपने दावे के समर्थन में पृथक से साक्ष्य प्रस्तुत करते हुए अपने दावे के तथ्य को साबित करने का दायित्व होता है। अतः केवल दावे के अभिवचन के आधार पर ही वादी को स्व0 गुणेशा की पुत्री होने के तथ्य को साबित नहीं माना जा सकता है। वादी के दावे के उक्त अभिवचन का प्रतिवादी द्वारा अपने जवाबदावे में कोई स्पष्ट व विशेष खण्डन नहीं किया है। प्रतिवादी के द्वारा उक्त तथ्य के स्पष्ट व विशेष खण्डन नहीं किये जाने की स्थिति में वादी द्वारा उक्त तथ्य को साक्ष्य के माध्यम से प्रमाणित किया जाना आवश्यक होना प्रतीत नहीं होता है।

28. अब प्रकरण में उक्त तथ्य के संबंध में वादी के द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य का अवलोकन किया जाना अपेक्षित है। इस संबंध में वादी द्वारा हलफनामा प्रस्तुत किया है। उक्त हलफनामे में वादी ने अभिकथन किया है कि वादीगण एवं प्रतिवादी संख्या 01—04 स्व0 गुणेशा के वारिसान है। इस प्रकार वादी ने अपने मौखिक साक्ष्य के माध्यम से साबित करने का प्रयास किया है कि वादी भी स्व0 गुणेशा की पुत्री है। इस संबंध में सबसे महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि मीरो पत्नी गुणेशा की फौत होने पर फौतगी का विरासत नामांतरण वादीनी व अन्य बहनों को शामिल करते हुए फैसल किया गया। उक्त नामांतरण वादी द्वारा प्रस्तुत सजरे के अनुसार ही फैसल किया गया है। इससे यह प्रबल अवधारणाा की जा सकती है कि गुणेशा की विधिक वारिसान वादीनी भी हैं।

29. वादी के हलफनामा के अवलोकन से ज्ञात होता है कि वादी को प्रतिवादी के परिवार के बारे में पूर्ण जानकारी है। वादी द्वारा स्व0 गुणेशा के परिवार की वंशावली का विवरण दिया है उसको प्रतिवादी ने स्वीकार किया है। अर्थात् वादी को प्रतिवादी के परिवार के बारे में पूर्ण जानकारी है। इस संबंध में भी प्रतिवादी द्वारा साक्ष्य प्रतिपरीक्षण में कोई सवाल नहीं किया गया है। वादी को स्व0 गुणेशा के परिवार के बारे में इतनी जानकारी होना तथा उक्त जानकारी को प्रतिवादी के

द्वारा स्वीकार किया जाना या स्पष्ट खण्डन नहीं करना अपने आप में वादी को स्व0 गुणेशा के परिवार के सदस्य होने के तथ्य को साबित करता है। इस प्रकार वादी अपने उपर आरोपित स्व0 गुणेशा की पुत्री होने के तथ्य के प्रमाणन के भार को निर्वहन करने में सफल रही है। साथ ही प्रतिवादी द्वारा अपने जवाबदावे एवं साक्ष्य प्रतिपरीक्षण में वादी एवं वादी द्वारा प्रस्तुत पारिवारिक सजरे के संबंध में किसी प्रकार का खण्डन प्रस्तुत नहीं किया है। इससे प्रमाणन का भार अब प्रतिवादी के उपर स्थानांतरित होता है।

30. इस प्रकार उक्त विश्लेषण से ज्ञात होता है कि वादी को स्व0 गुणेशा के परिवार के बारे में इतनी जानकारी होना तथा उक्त जानकारी को प्रतिवादी के द्वारा स्वीकार किया जाना या स्पष्ट खण्डन नहीं करना अपने आप में वादी को स्व0 गुणेशा के परिवार के सदस्य होने के तथ्य को साबित करता है। इस प्रकार मौखिक साक्ष्य व प्रतिवादी के उक्त तथ्य के स्वीकारनामे के माध्यम से वादी अपने उपर आरोपित स्व0 गुणेशा की पुत्री होने के तथ्य के प्रमाणन के भार को निर्वहन करने में सफल रही है। इससे अब प्रमाणन का भार प्रतिवादी के उपर स्थानांतरित होता है। प्रतिवादी द्वारा इस संबंध में जवाबदावा, साक्ष्य व गवाह में इसका खण्डन नहीं किया है। इस संबंध में प्रतिवादी के उपर आरोपित प्रमाणन का भार को निर्वहन करने में प्रतिवादी असफल रहे है। बल्कि उक्त तथ्य को स्वीकार किया है। इससे प्रमाणन का भार वापस वादी के उपर स्थानांतरित नहीं होता है। इस प्रकार वादी अपने उपर आरोपित स्व0 गुणेशा की पुत्री होने के तथ्य को उक्तानुसार साबित करने में सफल रही है। इस प्रकार वादी को स्व0 गुणेशा की ही पुत्री माना जाना उचित प्रतीत होता है।

31. उक्त प्रकार से अब प्रकरण में वादी को स्व0 गुणेशा की पुत्री माने जाने के पश्चात प्रकरण का तनकी में निहित द्वितीय बिन्दु पर विश्लेषण किया जाना अपेक्षित है। विधिक आधारों पर विश्लेषण किया जाना अपेक्षित प्रतीत होता है। प्रकरण में उक्त तनकी संख्या 01, 02 सारतः हिन्दू उतराधिकार अधिनियम–1956 की धारा–08 से संबंधित है। प्रकरण में तथ्यों के विश्लेषण से पूर्व प्रासंगिक कानूनी प्रावधानों का विश्लेषण आवश्यक है। इस संबंध में हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम–1956 की धारा–8 का प्रकरण में अवलोकन किया जाना आवश्यक है जिसके प्रासंगिक विवरण का उद्धरण इस प्रकार है:–

> ***8. General rules of succession in the case of males.***—
> *The property of a male Hindu dying intestate shall devolve according to the provisions of this Chapter:—*
> *(a) firstly, upon the heirs, being the relatives specified in class I of the Schedule;*
> *(b) secondly, if there is no heir of class I, then upon the heirs, being the relatives specified in class II of the Schedule;*
> *(c) thirdly, if there is no heir of any of the two classes, then upon the agnates of the deceased; and*
> *(d) lastly, if there is no agnate, then upon the cognates of the deceased.*

32. हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम–1956 की धारा–8 के अवलोकन से ज्ञात होता है कि किसी हिन्दू पुरूष के बिना वसीयत फौत हो जाने पर संपत्ति की विरासत हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम–1956 की धारा–8 के अनुसार सर्वप्रथम हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम–1956 की अनुसूची के वर्ग–1 के अनुसार दर्ज किये जाने के प्रावधान है। हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम–1956 की अनुसूची के वर्ग के अन्तर्गत वारिसों के मध्य संपत्ति की विरासत के संबंध में हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम–1956 की धारा–09 तथा धारा–10 के तहत प्रावधान बनाये गये है। प्रकरण में अपीलार्थी हिन्दू मृतक के वारिस अभिकथित किये जाने के कारण हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम–1956 की धारा–09 तथा धारा–10 का प्रकरण में अवलोकन किया जाना आवश्यक है जिसके प्रासंगिक विवरण का उद्धरण इस प्रकार हैः–

> ***9. Order of succession among heirs in the Schedule.—*** *Among the heirs specified in the Schedule, those in class I shall take simultaneously and to the exclusion of all other heirs; those in the first entry in class II shall be preferred to those in the second entry; those in the second entry shall be preferred to those in the third entry; and so on in succession.*
>
> ***10. Distribution of property among heirs in class I of the Schedule.*** *—The property of an intestate shall be divided among the heirs in class I of the Schedule in accordance with the following rules: —*
> *Rule 1.—The intestate's widow, or if there are more widows than one, all the widows together, shall take one share.*
> *Rule 2.—The surviving sons and daughters and the mother of the intestate shall each take one share.*
> *Rule 3.—The heirs in the branch of each pre-deceased son or each pre-deceased daughter of the intestate shall take between them one share.*
> *Rule 4.—The distribution of the share referred to in Rule 3—*
> *(i) among the heirs in the branch of the pre-deceased son shall be so made that his widow (or widows together) and the surviving sons and daughters get equal portions; and the branch of his pre-deceased sons gets the same portion;*
> *(ii) among the heirs in the branch of the pre-deceased daughter shall be so made that the surviving sons and daughters get equal portions.*

33. उक्त हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम–1956 की धारा–09 तथा धारा–10 के अवलोकन से ज्ञात होता है कि किसी हिन्दू पुरूष के बिना वसीयत फौत हो जाने पर संपत्ति की विरासत में हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम–1956 की अनुसूची के वर्ग–01 के सभी वारिस एक साथ तथा एक समान भाग प्राप्त करते है। किसी हिन्दू पुरूष के बिना वसीयत फौत हो जाने पर संपत्ति की विरासत में हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम–1956 की धारा–09 अनुसार अगर हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम–1956 की अनुसूची के वर्ग–01 के वारिस उपलब्ध नहीं होने पर हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम–1956 की अनुसूची के वर्ग–02 के वारिसों में सर्वप्रथम

प्रथम प्रविष्टि के वारिसों के नाम विरासत दर्ज करने के प्रावधान है। किसी हिन्दू पुरूष के बिना वसीयत फौत हो जाने पर संपत्ति की विरासत में हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम—1956 की धारा—09 अनुसार हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम—1956 की अनुसूची के वर्ग—01 के वारिसों के मध्य संपत्ति के विभाजन के सामान्य नियम व निर्देश दिये गये है।

34. प्रकरण में हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम—1956 की धारा—09 अनुसार हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम—1956 की अनुसूची के वर्ग—01 के वारिसों के मध्य संपत्ति के विभाजन हेतु हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम—1956 की अनुसूची का प्रकरण में अवलोकन किया जाना आवश्यक है जिसके प्रासंगिक विवरण का उद्धरण इस प्रकार हैः—

THE SCHEDULE (See section 8)
HEIRS IN CLASS I AND CLASS II

Class I

Son; daughter; widow; mother; son of a pre-deceased son; daughter of a pre-deceased son; son of a pre-deceased daughter; daughter of a pre-deceased daughter; widow of a pre-deceased son; son of a pre-deceased son of a pre-deceased son; daughter of a pre-deceased son of a pre-deceased son; widow of a pre-deceased son of a pre-deceased son [son of a predeceased daughter of a pre-deceased daughter; daughter of a pre-deceased daughter of a pre-deceased daughter; daughter of a pre-deceased son of a pre-deceased daughter; daughter of a pre-deceased daughter of a pre-deceased son.

35. प्रथम श्रेणी के वारिसों को निम्न सारणी अनुसार समझा जा सकता है—

Married Male - Hindu, Budhist, Jain, Sikh (Class I Heirs)

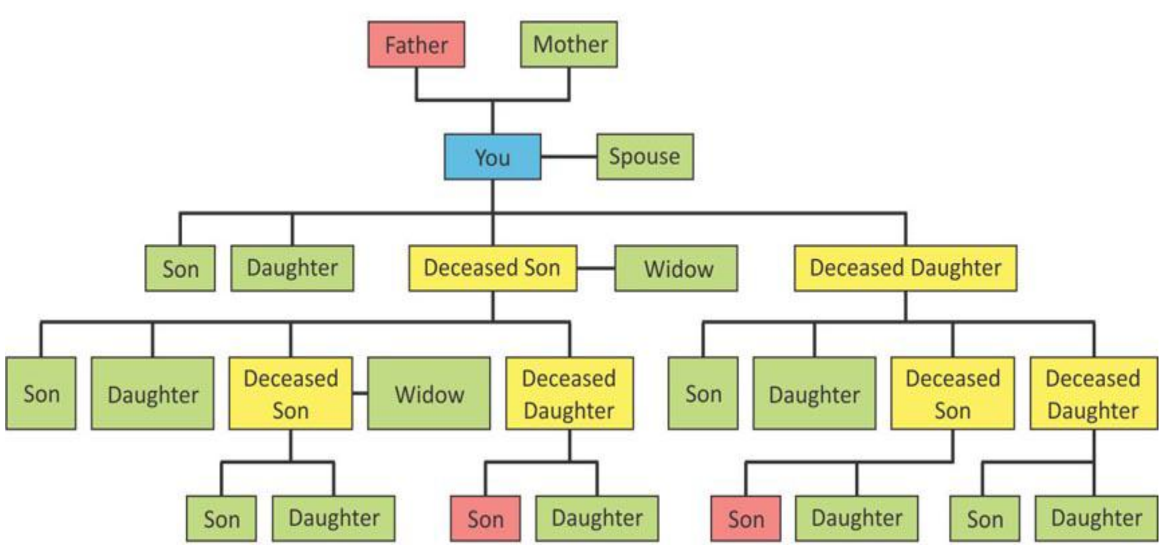

36. प्रकरण में हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम—1956 की धारा—09 अनुसार हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम—1956 की अनुसूची के वर्ग—01 के वारिसों के मध्य संपत्ति के विभाजन हेतु हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम—1956 की अनुसूची का प्रकरण में

अवलोकन से ज्ञात होता है कि किसी हिन्दू पुरूष के बिना वसीयत फौत हो जाने पर संपत्ति की विरासत में हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम–1956 की अनुसूची के वर्ग–01 के वारिसों में मृतक हिन्दू पुरूष के असल पुत्र, पुत्रीयों, पत्नी तथा माता को भी एक समान भाग प्राप्त होने के प्रावधान है।

37. प्रकरण में यह निर्विवादित है कि स्व0 गुणेशा के 01 पुत्र है। इस प्रकार हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम–1956 की धारा–09 अनुसार हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम–1956 की अनुसूची के वर्ग–01 के वारिसों के मध्य संपत्ति के न्यायगमन के आधार पर स्व0 गुणेशा की संपत्ति में चतरसिंह का हिस्सा निहित है। इसी प्रकार प्रकरण में वादी अपने पिता स्व0 गुणेशा की प्रथम श्रेणी की वारिस है। इस कारण हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम–1956 की धारा–09 अनुसार हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम–1956 की अनुसूची के वर्ग–01 के वारिसों के मध्य संपत्ति के न्यागमन होने की स्थिति में स्व0 गुणेशा के प्रथम श्रेणी की वारिस वादीगण व प्रतिवादी संख्या 01–04 को ही स्व0 गुणेशा का उक्त संपत्ति में 1/5 हिस्सा वादी के उपर न्यागत होना विधिसंगत है। अतः वादी के पिता स्व0 गुणेशा की सम्पत्ति में वादीगण व प्रतिवादी संख्या 01–04 के हित व अधिकार निहित हैं।

38. प्रकरण में वादी भागुकंवर अपने पिता स्व0 गुणेशा की प्रथम श्रेणी की वारिस है। प्रकरण में तहसीलदार द्वारा स्व0 गुणेशा की विरासत वादी भागुकंवर के प्रथम श्रेणी के वारिस होकर उपस्थित होने के बावजूद भी केवल प्रतिवादी संख्या 01 एवं वादी व प्रतिवादी संख्या 01–04 की माता मीरोंदेवी के नाम हिन्दू उतराधिकार अधिनियम–1956 के विपरीत दर्ज की है। इस प्रकार वादी उक्त प्रमाणन के भार (Onus of Proof) को निष्पादित करने में सफल रहे हैं। इस प्रकार प्रमाणन के भार (Onus of Proof) अब प्रतिवादी के उपर स्थानांतरित होता है। इस संबंध में प्रतिवादी के उपर आरोपित प्रमाणन का भार (Onus of Proof) को निर्वहन करने में प्रतिवादी असफल रहे है। इससे प्रमाणन का भार (Onus of Proof) वापस वादी के उपर स्थानांतरित नहीं होता है। इस प्रकार वादी अपना पक्ष को (Burden of Proof) साबित करने में सफल रहे हैं।

सत्यमेव जयते

39. इस आधार पर मुतनाजा आराजी पर स्व0 गुणेशा के हिस्से पर वादीगण व प्रतिवादी संख्या 01–04 के अधिकार निहित है। यहां उल्लेखनीय है कि राजस्थान काश्तकारी अधिनियम–1955 की धारा–15 के तहत किसी काश्तकार के पूर्व से ही निहित अधिकारों की घोषणा करने हेतु प्रावधान बनाए गए है। एक प्रकार से खातेदारी अधिकारों की घोषणा किसी प्रकार के अधिकारों का नवसृजन नहीं है। बल्कि संबंधित काश्तकार के प्रश्नगत आराजी में राजस्थान काश्तकारी अधिनियम–1955 की धारा–15 के तहत या अन्य प्रभावी कानून के तहत प्रदत्त एवं पूर्व से ही निहित अधिकारों का प्रस्फुटन/उद्घोषणा मात्र है। इस प्रकार तनकी संख्या 01 को साबित करने में वादी सफल रहा है। इस प्रकार तनकी संख्या 01 प्रकरण में तनकी संख्या 02 के निष्कर्ष के अध्यधीन रहते हुए वादी के पक्ष में फैसल की जाती है। इस आधार पर हिन्दु उत्तराधिकार अधिनियम–1956 की धारा–08 के तहत गुणेशा की सम्पति में विरासत में वादी व प्रतिवादी संख्या 01–04 के प्रथम श्रेणी के वारिस होने के आधार पर मुतनाजा आराजी में वादी का 1/6 हिस्सा तथा प्रतिवादी संख्या

01–04 प्रत्येक का 1/6–1/6 हिस्सा तथा मीरो पत्नी गुणेशा का 1/6 हिस्सा निहित है।

40. इस संबंध में तनकी संख्या 02, 06 के संबंध में विश्लेषण किया जाना अपेक्षित है। प्रकरण में तनकी संख्या 02, 06 निम्न प्रकार हैः–

> *3. आया प्रतिवादी संख्या 06 मुतनाजा आराजी पर प्रतिवादी संख्या 01 द्वारा अपने 3/5 हिस्से में से 02 बीघा भूमि का बेचान जरिये पंजीबद्ध बयनामा दिनांक 20.11.2024 को प्रतिवादी संख्या 06 को करते हुए कब्जा सुपुर्द करने के कारण वादी को उक्त अंतरण की आराजी पर कोई अधिकार नहीं होने के आधार पर खातेदारी अधिकारों की घोषणा का अनुतोष पोषणीय नहीं होने तथा उक्त 02 बीघा आराजी पर प्रतिवादी संख्या 06 का सालिम कब्जा होने के कारण स्थायी निषेधाज्ञा का प्रकरण नहीं बनने के कारण काबिल–ए–खारिज है।*
>
> *............................प्रतिवादी संख्या 06*
>
> *4. आया मुतनाजा आराजी पर प्रतिवादी संख्या 01 द्वारा अपने 3/5 हिस्से में से 02 बीघा भूमि का बेचान जरिये पंजीबद्ध बयनामा दिनांक 20.11.2024 को प्रतिवादी संख्या 06 को करते हुए कब्जा सुपुर्द करने के कारण प्रतिवादी संख्या 06 अपने 3238/8579 हिस्से की खातेदारी अधिकारों की घोषणा प्राप्त करने के अधिकारी है।*
>
> *............................प्रतिवादी संख्या 06*

41. प्रकरण में तनकी संख्या 03 व 04 को साबित करने का भार प्रतिवादी के उपर है। उक्त दोनों तनकी प्रतिवादी संख्या 01 व 02 द्वारा प्रतिवादी संख्या 06 को दिनांक 20.11.2024 किये गये मुतनाजा आराजी में से 02 बीघा आराजी के अंतरण तथा प्रतिवादी संख्या 08 को दिनांक 20.10.2012 को 01 बीघा भूमि के अंतरण को चुनौती देने से संबंधित हैं। इस प्रकार उक्त तनकी में निम्न कानूनी बिन्दुओं पर विश्लेषण किया जाना अपेक्षित हैः–

   1. *मुतनाजा आराजी का गुणेशा की विरासत के पश्चात् वादी की पृथक व स्वतंत्र सम्पत्ति होना।*
   2. *मुतनाजा आराजी का प्रतिवादी द्वारा निष्पादित पंजीबद्ध बयनामा का आरम्भ से शून्य, अवैध व निष्प्रभावी होना।*

42. प्रकरण में मृत्तक गुणेशा की विरासत से प्राप्त सम्पत्ति को वादी की स्वतंत्र व पृथक सम्पत्ति होने के संबंध में विश्लेषण किया जाना अपेक्षित है। इस संबंध में सर्वप्रथम कानूनी स्थिति को समझना आवश्यक है।

Coparcenary Property & Succession u/s 8

43. इसके साथ ही सहदायिकी संपति पर हिन्दू उतराधिकार अधिनियम–1956 की धारा–08 के प्रभाव को समझना आवश्यक है। इस संबंध में माननीय न्यायालयों द्वारा प्रतिपादित असंख्य न्यायिक दृष्टांतों के द्वारा सहदायिकी संपति पर हिन्दू उतराधिकार अधिनियम–1956 की धारा–08 के प्रभाव की व्याख्या की गई है। इस श्रृंखला में कुछ महत्वपूर्ण न्यायिक दृष्टांतों द्वारा की गई विवेचना का उद्धरण प्रकरण में प्रासंगिक है। इस संबध में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा *CS(OS) No. 431/2006* बउनवान ***Commissioner Of Wealth Tax. Kanpur Etc. ... vs Chander Sen*** में

दिनांक 16.07.1986 को दिये गये निर्णय में सहदायिकी संपति पर हिन्दू उतराधिकार अधिनियम–1956 की धारा–08 के प्रभाव के संबंध में विवेचना की है। जिसके प्रासंगिक पैरा का उद्धरण निम्न प्रकार हैः–

It is necessary to bear in mind the Preamble to the Hindu Succession Act, 1956. The Preamble states that it was an Act to amend and codify the law relating to intestate succession among Hindus.

In view of the preamble to the Act, i.e., that to modify where necessary and to codify the law, in our opinion it is not possible when Schedule indicates heirs in class I and only includes son and does not include son's son but does include son of a predeceased son, to say that when son inherits the property in the situation contemplated by section 8 he takes it as karta of his own undivided family. The Gujarat High Court's view noted above, if accepted, would mean that though the son of a predeceased son and not the son of a son who is intended to be excluded under section 8 to inherit, the latter would by applying the old Hindu law get a right by birth of the said property contrary to the scheme outlined in section 8. Furthermore as noted by the Andhra Pradesh High Court that the Act makes it clear by section 4 that one should look to the Act in case of doubt and not to the pre-existing Hindu law. It would be difficult to hold today the property which devolved on a Hindu under section 8 of the Hindu Succession would be HUF in his hand vis-a-vis his own son; that would amount to creating two classes among the heirs mentioned in class I, the male heirs in whose hands it will be joint Hindu family property and vis-a-vis son and female heirs with respect to whom no such concept could be applied or contemplated. It may be mentioned that heirs in class I of Schedule under section 8 of the Act included widow, mother, daughter of predeceased son etc. Before we conclude we may state that we have noted the obervations of Mulla's Commentary on Hindu law 15th Edn. dealing with section 6 of the Hindu Succession Act at page 924-26 as well as Mayne's on Hindu Law, 12th Edition pages 918-919.

The express words of section 8 of The Hindu Succession Act, 1956 cannot be ingorned and must prevail. The preamble to the Act reiterates that the Act is, inter alia, to 'amend' the law, with that background the express language which excludes son's son but included son of a predeceased son cannot be ignored.

In the aforesaid light the views expressed by the Allahabad High Court, the Madras High Court, Madhya Pradesh High Court, and the Andhra Pradesh High Court, appear to us to be correct. With respect we are unable to

agree with the views of the Gujarat High Court noted hereinbefore.

44. इसी प्रकार माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **1987 AIR 558** बउनवान ***Yudhishter vs Ashok Kumar*** में दिनांक 11.12.1986 को दिये गये निर्णय में सहदायिकी संपति पर हिन्दू उतराधिकार अधिनियम–1956 की धारा–08 के प्रभाव के संबंध में विवेचना की है। जिसके प्रासंगिक पैरा का उद्धरण निम्न प्रकार हैः–

> *This question has been considered by this Court in Commissioner of Wealth Tax, Kanpur and Others v. Chander Sen and Others, [1986] 3 SCC 567 where one of us (Sabyasachi Mukharji, J) observed that under the Hindu Law, the moment a son is born, he gets a share in father's property and become part of the coparcenary. His fight accrues to him not on the' death of the father or inheritance from the father but with the very fact of his birth. Normally, therefore whenev- er the father gets a property from whatever source, from the grandfather or from any other source, be it separated property or not, his son should have a share in that and it will become part of the joint Hindu family of his son and grandson and other members who form joint Hindu family with him. This Court observed that this position has been affect- ed by section8 of the Hindu Succession Act, 1956 and, there- fore, after the Act, when the son inherited the property in the situation contemplated by section 8, he does not take it as Kar of his own undivided family but takes it in his individual capacity. At pages 577 to 578 of the report, this Court dealt with the effect of section 6 of the Hindu Suc- cession Act, 1956 and. the commentary made by Mulla, 15th Edn. pages 924-926 as well as Mayne's on Hindu Law 12th Edition pages 918919. Shri Banerji relied on the said obser- vations of Mayne on 'Hindu Law', 12th Edn. at pages 918-919. This Court observed in the aforesaid decision that the views expressed by the Allahabad High Court, the Madras High Court, the Madhya Pradesh High Court and the Andhra Pradesh High Court appeared to be correct and was unable to accept the views of the Gujarat High Court. To the similar effect is the observation of learned author of Mayne's Hindu Law, 12th Edn. page 919. In that view of the matter, it would be difficult to hold that property which developed on a Hindu under section 8 of the Hindu Succession Act, 1956 would be HUF in his hand vis-a- vis his own sons.*

45. इसी प्रकार माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा सिविल अपील संख्या 1233/2008 बउनवान ***Bhanwar Singh vs Puran*** में दिनांक 12.02.2008 को दिये गये निर्णय में सहदायिकी संपति पर हिन्दू उतराधिकार अधिनियम–1956 की धारा–08 के प्रभाव के संबंध में विवेचना की है। जिसके प्रासंगिक पैरा का उद्धरण निम्न प्रकार हैः–

> *11. The Act brought about a sea change in the matter of inheritance and succession amongst Hindus. Section 4 of the Act contains a non-obstente provision in terms whereof*

any text, rule or interpretation of Hindu Law or any custom or usage as part of that law in force immediately before the commencement of the Act, ceased to have effect with respect to any matter for which provision is made therein save as otherwise expressly provided. Section 6 of the Act, as it stood at the relevant time, provided for devolution of interest in the coparcenary property. Section 8 lays down the general rules of succession that the property of a male dying intestate devolve according to the provisions of the Chapter as specified in clause (1) of the Schedule. In the Schedule appended to the Act, natural sons and daughters are placed in Class-I heirs but a grandson, so long as father is alive, has not been included. Section 19 of the Act provides that in the event of succession by two or more heirs, they will take the property per capita and not per stirpes, as also tenants-in-common and not as joint tenants.

46. इसी प्रकार माननीय दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा *CS(OS) No. 431/2006* बउनवान ***Sunny (Minor) & Anr. vs Sh. Raj Singh*** में दिनांक 17.11.2015 को दिये गये निर्णय में सहदायिकी संपति पर हिन्दू उतराधिकार अधिनियम–1956 की धारा–08 के प्रभाव के संबंध में विवेचना की है। जिसके प्रासंगिक पैरा का उद्धरण निम्न प्रकार है:–

7(i). As per the ratio of the Supreme Court in the case of Yudhishter (supra) after passing of the Hindu Succession Act, 1956 the position which traditionally existed with respect to an automatic right of a person in properties inherited by his paternal predecessors-in-interest from the latter's paternal ancestors upto three degrees above, has come to an end. Under the traditional Hindu Law whenever a male ancestor inherited any property from any of his paternal ancestors upto three degrees above him, then his male legal heirs upto three degrees below him had a right in that property equal to that of the person who inherited the same. Putting it in other words when a person 'A' inherited property from his father or grandfather or great grandfather then the property in his hand was not to be treated as a self- acquired property but was to be treated as an HUF property in which his son, grandson and great grandson had a right equal to 'A'. After passing of the Hindu Succession Act, 1956, this position has undergone a change and if a person after 1956 inherits a property from his paternal ancestors, the said property is not an HUF property in his hands and the property is to be taken as a self-acquired property of the person who inherits the same. There are two exceptions to a property inherited by such a person being and remaining self-acquired in his hands, and which will be either an HUF and its properties was existing even prior to the passing of the Hindu Succession Act, 1956 and which Hindu Undivided Family continued even after passing of the Hindu Succession Act, 1956, and in which

case since HUF existed and continued before and after 1956, the property inherited by a member of an HUF even after 1956 would be HUF property in his hands to which his paternal successors-in-interest upto the three degrees would have a right. The second exception to the property in the hands of a person being not self- acquired property but an HUF property is if after 1956 a person who owns a self-acquired property throws the self-acquired property into a common hotchpotch whereby such property or properties thrown into a common hotchpotch become Joint Hindu Family properties/HUF properties. In order to claim the properties in this second exception position as being HUF/Joint Hindu Family properties/properties, a plaintiff has to establish to the satisfaction of the court that when (i.e date and year) was a particular property or properties thrown in common hotchpotch and hence HUF/Joint Hindu Family created.

(ii) This position of law alongwith facts as to how the properties are HUF properties was required to be stated as a positive statement in the plaint of the present case, but it is seen that except uttering a mantra of the properties inherited by defendant no.1 being 'ancestral' properties and thus the existence of HUF, there is no statement or a single averment in the plaint as to when was this HUF which is stated to own the HUF properties came into existence or was created ie whether it existed even before 1956 or it was created for the first time after 1956 by throwing the property/properties into a common hotchpotch. This aspect and related aspects in detail I am discussing hereinafter.

8(i). A reference to the plaint shows that firstly it is stated that Sh. Tek Chand who is the father of the defendant no.1 (and grandfather of Sh. Harvinder Sejwal and defendants no.2 to 4) inherited various ancestral properties which became the basis of the Joint Hindu Family properties of the parties as stated in para 15 of the plaint. In law there is a difference between the ancestral property/properties and the Hindu Undivided Family property/properties for the pre 1956 and post 1956 position as stated above because inheritance of ancestral properties prior to 1956 made such properties HUF properties in the hands of the person who inherits them, but if ancestral properties are inherited by a person after 1956, such inheritance in the latter case is as self-acquired properties unless of course it is shown in the latter case that HUF existed prior to 1956 and continued thereafter.

47. इसी प्रकार माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा सिविल अपील संख्या 2360 / 2016 बउनवान ***Uttam vs Saubhag Singh*** में दिनांक 02.03.2016 को दिये गये निर्णय में

सहदायिकी संपति पर हिन्दू उतराधिकार अधिनियम–1956 की धारा–08 के प्रभाव के संबंध में विवेचना की है। जिसके प्रासंगिक पैरा का उद्धरण निम्न प्रकार हैः–

> *20. ....*
> *(vi) On a conjoint reading of Sections 4, 8 and 19 of the Act, after joint family property has been distributed in accordance with section 8 on principles of intestacy, the joint family property ceases to be joint family property in the hands of the various persons who have succeeded to it as they hold the property as tenants in common and not as joint tenants.*

48. इसी प्रकार माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा सिविल अपील संख्या 5124 / 2019 बउनवान ***Arshnoor Singh vs Harpal Kaur*** में दिनांक 01.07.2019 को दिये गये निर्णय में सहदायिकी संपति पर हिन्दू उतराधिकार अधिनियम–1956 की धारा–08 के प्रभाव के संबंध में विवेचना की है। जिसके प्रासंगिक पैरा का उद्धरण निम्न प्रकार हैः–

> *7.5. After the Hindu Succession Act, 1956 came into force, this position has undergone a change. Post – 1956, if a person inherits a selfacquired property from his paternal ancestors, the said property becomes his self acquired property, and does not remain coparcenary property.*
>
> *7.6. If succession opened under the old Hindu law, i.e. prior to the commencement of the Hindu Succession Act, 1956, the parties would be governed by Mitakshara law. The property inherited by a male Hindu from his paternal male ancestor shall be coparcenary property in his hands visàvis his male descendants upto three degrees below him. The nature of property will remain as coparcenary property even after the commencement of the Hindu Succession Act, 1956.*

49. इसी प्रकार माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा सिविल अपील संख्या 5401 / 2025 बउनवान ***Angadi Chandranna vs Shankar*** में दिनांक 22.04.2025 को दिये गये निर्णय में सहदायिकी संपति पर हिन्दू उतराधिकार अधिनियम–1956 की धारा–08 के प्रभाव के संबंध में विवेचना की है। जिसके प्रासंगिक पैरा का उद्धरण निम्न प्रकार हैः–

> *13. Further, it is a settled principle of law that there is no presumption of a property being joint family property only on account of existence of a joint Hindu family. The one who asserts has to prove that the property is a joint family property. If, however, the person so asserting proves that there was nucleus with which the joint family property could be acquired, then there would be presumption of the property being joint and the onus would shift on the person who claims it to be self-acquired property to prove that he purchased the property with his own funds and not out of joint family nucleus that was available. That apart, while considering the term 'nucleus' it should always be borne in mind that such nucleus has to be established as a*

matter of fact and the existence of such nucleus cannot normally be presumed or assumed on probabilities. This Court in R.Deivanai Ammal (Died) v. G. Meenakshi Ammal12, dealt with the concept of Hindu Law, ancestral property and the nucleus existing therein. The relevant paragraphs are extracted below for ready reference:

> *"13. First let us consider the nature of the suit properties, namely, self-acquired properties of late Ganapathy Moopanar or ancestral properties and whether any nucleus was available to purchase the properties. Under the Hindu Law it is only when a person alleging that the property is ancestral property proves that there was a nucleus by means of which other property may have been acquired, that the burden is shifted on the party alleging self-acquisitions to prove that the property was acquired without any aid from the family estate. In other words the mere existence of a nucleus however small or insignificant is not enough. It should be shown to be of such a character as could reasonably be expected to lead to the acquisition of the property alleged to be part of the joint family property. Where the doctrine of blending is invoked against a person having income at his disposal and acquiring property, the reasonable presumption to make is that he had the income at his absolute disposal unless there is evidence to the contrary. If a coparcener desires to establish that a property in the name of a female member of the family or in the name of the manager himself has to be accepted and treated as property acquired from the joint family nucleus, it is absolutely essential that such a coparcener should not only barely plead the same, but also establish the existence of such a joint family fund or nucleus. Even if the joint family nucleus is so established, the prescription that the accretions made by the manager or the purchases made by him should be deemed to be from and out of such a nucleus does not arise, if there is no proof that such nucleus of the joint family is not an income-yielding apparatus. The proof required is very strict and the burden is on the person who sets up a case that the property in the name of a female member of the family or in the name of the manager or any other coparcener is to be treated as joint family property. There should be proof of the availability of such surplus income or joint family nucleus on the date of such acquisitions or purchases. The same is the principle even in the cases where moneys were advanced on mortgages over immoveable properties. The onus is not on the acquirer to prove that the property standing in his name was purchased from joint family funds. That*

may be so, in the case of a manager of a joint family, but not so in the case of all coparceners. For a greater reason it is not so in the case of female members.

14. The doctrine of blending of self-acquired property with joint family has to be carefully applied with reference to the facts of each case. No doubt it is settled that when members of a joint family by their joint labour or in their joint business acquired property, that property, in the absence of a clear indication of a contrary intention, would be owned by them as joint family property and their male issues would necessarily acquire a right by birth in such property. But the essential sine qua non is the absence of a contrary intention. If there is satisfactory evidence of an intention on the part of the acquirer such property to treat it as his own, but not as joint family property, the presumption which ordinarily arises, according to the personal law of Hindus that such property would be regarded as joint family property, will not arise.

15. It is a well-established principle of law that where a party claims that any particular item of property is joint family property, the burden of proving that it is so rests on the party asserting it. Where it is established or admitted that the family possessed some joint property which from its nature and relative value may have formed the nucleus from which the property in question may have been acquired, the presumption arises that it was joint property and the burden shifts to the party alleging self-acquisition to establish affirmatively that the property was acquired without the aid of the joint family. But no such presumption would arise if the nucleus is such that with its help the property claimed to be joint could not have been acquired. In order to give rise to the presumption, the nucleus should be such that with its help the property claimed to be joint could have been acquired. A family house in the occupation of the members and yielding no income could not be nucleus out of which acquisitions could be made even though it might be of considerable value.

16. In a Hindu joint family, if one member sues for partition on the foot that the properties claimed by him are joint family properties then three circumstances ordinarily arise. The first is an admitted case when there is no dispute about the existence of the joint family properties at all. The second is a case where certain properties are admitted to the joint family properties and the other

properties in which a share is claimed are alleged to be the accretions or acquisitions from the income available from joint family properties or in the alternative have been acquired by a sale or conversion of such available properties. The third head is that the properties standing in the names of female members of the family are benami and that such a state of affairs has been deliberately created by the manager or the head of the family and that really the properties or the amounts standing in the names of female members are properties of the joint family. While considering the term 'nucleus' it should always be borne in mind that such nucleus has to be established as a matter of fact and the existence of such nucleus cannot normally be presumed or assumed on probabilities. The extent of the property, the income from the property, the normal liability with which such income would be charged and the net available surplus of such joint family property do all enter into computation for the purpose of assessing the content of the reservoir of such a nucleus from which alone it could, with reasonable certainty, be said that the other joint family properties have been purchased unless a strong link or nexus is established between the available surplus income and the alleged joint family properties. The person who comes to Court with such bare allegations without any substantial proof to back it up should fail.

17. It is also a well-established doctrine of Hindu Law that property which was originally self-acquired may become joint property if it has been voluntarily thrown by the coparcener into the joint stock with the intention of abandoning all separate claims upto it. But the question whether the coparcener has done so or not is entirely a question of fact to be decided in the light of all the circumstances of the case. It must be established that there was a clear intention on the part of the coparcener to waive his separate rights and such an intention will not be inferred from acts which may have been done from kindness or affection. The important point to keep in mind is that the separate property of a Hindu coparcener ceases to be his separate property and acquires the characteristics of his joint family or ancestral property, not by mere act of physical mixing with his joint family or ancestral property, but by his own volition and intention by his waiving or surrendering his special right in it as separate property. Such intention can

be discovered only from his words or from his acts and conduct."

14. It is also to be noted that in Hindu law, for a property to be considered as an ancestral property, it has to be inherited from any of the paternal ancestors up to three generations. In this regard, it would be appropriate to refer to the judgment of this Court in Govindbhai Chhotabhai Patel & Ors. v. Patel Ramanbhai Mathurbhai13, wherein it has been held as under:

"18. The learned counsel for the appellants has referred to Shyam Narayan Prasad [Shyam Narayan Prasad v. Krishna Prasad, (2018) 7 SCC 646 : (2018) 3 SCC (Civ) 702] . That is a case in which the property in question was held to be ancestral property by the trial court. The plaintiffs therein being sons and grandson of one of the sons of Gopal Prasad, the last male holder was found to have equal share in the property. The question examined was whether the property allotted to one of the sons of Gopal Prasad in partition retains the character of coparcenary property. It was the said finding which was affirmed by this Court. This Court held as under: (SCC p. 651, para 12) "12. It is settled that the property inherited by a male Hindu from his father, father's father or father's father's father is an ancestral property. The essential feature of ancestral property, according to Mitakshara law, is that the sons, grandsons, and great grandsons of the person who inherits it, acquire an interest and the rights attached to such property at the moment of their birth.

The share which a coparcener obtains on partition of ancestral property is (2020) 16 SCC 255 ancestral property as regards his male issue. After partition, the property in the hands of the son will continue to be the ancestral property and the natural or adopted son of that son will take interest in it and is entitled to it by survivorship." … … … …

20. In view of the undisputed fact, that Ashabhai Patel purchased the property, therefore, he was competent to execute the will in favour of any person. Since the beneficiary of the will was his son and in the absence of any intention in the will, beneficiary would acquire the property as self-acquired property in terms of C.N. Arunachala Mudaliar case [C.N. Arunachala Mudaliar v. C.A. Muruganatha Mudaliar, (1953) 2 SCC 362 : 1954 SCR 243 : AIR 1953 SC 495]. The burden of proof that the property was ancestral was on the plaintiffs alone. It was for them to prove that the will of Ashabhai intended to convey the property for the benefit of the family so as to be treated as ancestral property. In the absence of any such

averment or proof, the property in the hands of donor has to be treated as self-acquired property. Once the property in the hands of donor is held to be self-acquired property, he was competent to deal with his property in such a manner he considers as proper including by executing a gift deed in favour of a stranger to the family."

50. इस संबंध में माननीय दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा *CS (OS) No.1737/2012* बउनवान ***Sh. Surender Kumar vs Sh. Dhani Ram*** में दिनांक 18.01.2016 को दिये गये निर्णय में हिन्दू उतराधिकार अधिनियम–1956 के लागू होने के पश्चात परिवर्तन के संबंध में विवेचना की है। जिसके प्रासंगिक पैरा का उद्धरण निम्न प्रकार हैः–

5. The Supreme Court around 30 years back in the judgment in the case of Commissioner of Wealth Tax, Kanpur and Others Vs. Chander Sen and Others, (1986) 3 SCC 567, held that after passing of the Hindu Succession Act, 1956 the traditional view that on inheritance of an immovable property from paternal ancestors up to three degrees, automatically an HUF came into existence, no longer remained the legal position in view of Section 8 of the Hindu Succession Act, 1956. This judgment of the Supreme Court in the case of Chander Sen (supra) was thereafter followed by the Supreme Court in the case of Yudhishter Vs. Ashok Kumar, (1987) 1 SCC 204 wherein the Supreme Court reiterated the legal position that after coming into force of Section 8 of the Hindu Succession Act, 1956, inheritance of ancestral property after 1956 does not create an HUF property and inheritance of ancestral property after 1956 therefore does not result in creation of an HUF property.

6. In view of the ratios of the judgments in the cases of Chander Sen (supra) and Yudhishter (supra), in law ancestral property can only become an HUF property if inheritance is before 1956, and such HUF property therefore which came into existence before 1956 continues as such even after 1956. In such a case, since an HUF already existed prior to 1956, thereafter, since the same HUF with its properties continues, the status of joint Hindu family/HUF properties continues, and only in such a case, members of such joint Hindu family are coparceners entitling them to a share in the HUF properties.

7. On the legal position which emerges pre 1956 i.e before passing of the Hindu Succession Act, 1956 and post 1956 i.e after passing of the Hindu Succession Act, 1956, the same has been considered by me recently in the judgment in the case of Sunny (Minor) & Anr. vs. Sh. Raj Singh & Ors., CS(OS) No.431/2006 decided on 17.11.2015. In this judgment, I have referred to and relied upon the ratio of the judgment of the Supreme Court in the case of

Yudhishter (supra) and have essentially arrived at the following conclusions:-

(i) If a person dies after passing of the Hindu Succession Act, 1956 and there is no HUF existing at the time of the death of such a person, inheritance of an immovable property of such a person by his successors-in-interest is no doubt inheritance of an 'ancestral' property but the inheritance is as a self acquired property in the hands of the successor and not as an HUF property although the successor(s) indeed inherits 'ancestral' property i.e a property belonging to his paternal ancestor.

(ii) The only way in which a Hindu Undivided Family/joint Hindu family can come into existence after 1956 (and when a joint Hindu family did not exist prior to 1956) is if an individual's property is thrown into a common hotchpotch. Also, once a property is thrown into a common hotchpotch, it is necessary that the exact details of the specific date/month/year etc of creation of an HUF for the first time by throwing a property into a common hotchpotch have to be clearly pleaded and mentioned and which requirement is a legal requirement because of Order VI Rule 4 CPC which provides that all necessary factual details of the cause of action must be clearly stated. Thus, if an HUF property exists because of its such creation by throwing of self-acquired property by a person in the common hotchpotch, consequently there is entitlement in coparceners etc to a share in such HUF property.

(iii) An HUF can also exist if paternal ancestral properties are inherited prior to 1956, and such status of parties qua the properties has continued after 1956 with respect to properties inherited prior to 1956 from paternal ancestors. Once that status and position continues even after 1956; of the HUF and of its properties existing; a coparcener etc will have a right to seek partition of the properties.

(iv) Even before 1956, an HUF can come into existence even without inheritance of ancestral property from paternal ancestors, as HUF could have been created prior to 1956 by throwing of individual property into a common hotchpotch. If such an HUF continues even after 1956, then in such a case a coparcener etc of an HUF was entitled to partition of the HUF property.

51. इस प्रकार सहदायिकी संपति पर हिन्दू उतराधिकार अधिनियम–1956 की धारा–08 के प्रभाव के संबंध में उपरोक्त न्यायिक दृष्टांतों में की गई विवेचना है। उपरोक्त

न्यायिक दृष्टांतों द्वारा हिन्दू विधि के तहत हिन्दू उतराधिकार अधिनियम—1956 की धारा—08 के प्रभाव की कानून की स्थिति निम्न प्रकार स्पष्ट की गई है:—

1. *हिन्दू उतराधिकार अधिनियम—1956 के लागू होने के पश्चात धारा—8 के तहत विरासत के तहत प्राप्त संपति को प्राप्तकर्ता हिन्दू की पैतृक/सहदायिकी संपति नहीं मानकर प्राप्तकर्ता हिन्दू की पृथक संपति माना जाता है।*
2. *अगर उक्त स्थिति में विरासत हिन्दू उतराधिकार अधिनियम—1956 के लागू होने से पूर्व खुलती हैं उस स्थिति में ही विरासत के तहत प्राप्त संपति को प्राप्तकर्ता हिन्दू की पैतृक संपति माना जाता है।*
3. *हिन्दू संयुक्त परिवार के किसी सदस्य की पृथक संपति उस सदस्य विशेष द्वारा हिन्दू संयुक्त परिवार या सहदायिकी संपति के बंडल में स्वेच्छा से समर्पित करने पर ही उस सदस्य विशेष की पृथक संपति सहदायक संपति का हिस्सा मानी जाती है।*

52. उक्त कानूनी स्थिति के संबंध में प्रकरण के तथ्यों का विश्लेषण किया जाना अपेक्षित है। प्रकरण में मुतनाजा आराजी गुणेशा की फौत के पश्चात् विरासत में प्राप्त हुई है। प्रकरण में तनकी संख्या 01 के वादी के पक्ष में स्वीकार होने से स्पष्ट है कि मुतनाजा आराजी पर वादी का हिन्दु उत्तराधिकार अधिनियम—1956 की धारा—08 के तहत प्रथम श्रेणी की वारिस होने के आधार पर 1/6 हक हिस्सा निहित हैं। इस प्रकार वादी को गुणेशा की विरासत से प्राप्त सम्पत्ति उक्त कानूनी स्थिति के अनुसार पृथक व स्वतंत्र सम्पत्ति है। इस संबंध में प्रतिवादी द्वारा यह स्पष्ट नहीं किया गया है कि वादी द्वारा अपनी स्वतंत्र व पृथक सम्पत्ति को सहदायिकी सम्पत्ति के बण्डल में स्वेच्छा से मिश्रित किया गया हो। इस स्थिति में वादी द्वारा अपनी स्वतंत्र व पृथक सम्पत्ति को सहदायिकी सम्पत्ति के बण्डल में स्वेच्छा से मिश्रित नहीं करने से गुणेशा की सम्पत्ति का विरासत में वादी को प्राप्त सम्पत्ति वादी की पृथक व स्वतंत्र सम्पत्ति माना जाना उचित प्रतीत होता है। उक्त सम्पत्ति के वादी की स्वतंत्र व पृथक सम्पत्ति माना जाने से उक्त प्राप्त 1/6 हिस्से की सम्पत्ति को निस्तारण का पूर्ण अधिकार वादी को ही है।

53. प्रकरण में अब तनकी के द्वितीय बिन्दु के विश्लेषण हेतु तनकी के विश्लेषण से पूर्व पंजीकृत दस्तावेज के शून्यकरणीय व आरंभ से शून्य होने तथा राजस्व न्यायालय व सिविल न्यायालय के क्षेत्राधिकार को लेकर विधि की स्थिति को समझना आवश्यक है।

Void : Voidable

54. इस संबध में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा सिविल अपील संख्या 598/2005 बउनवान ***Baljinder Singh vs Rattan Singh*** में दिनांक 05.08.2008 को दिये गये निर्णय में शून्य व शून्यकरणीय होने की संकल्पना/अवधारणा के संबंध में विवेचना की है। जिसके प्रासंगिक पैरा का उद्धरण निम्न प्रकार है:—

> *24. In Sadasivam v. K. Doraisamy (AIR 1996 SC 1724) it was found that when the father has executed sale deed in*

favour of a near relative and the intention to repay debt or legal necessity has not been proved as a sham transaction.

25. In Words and Phrases by Justice R.P. Sethi the expression `void' and `'voidable' read as under:

"Void- Black's Law Dictionary gives the meaning of the word "void" as having different nuances in different connotations. One of them is of course "null or having no legal force or binding effect". And the other is "unable in law, to support the purpose for which it was intended". After referring to the nuances between void and voidable the lexicographer pointed out the following: "The word `void' in its strictest sense, means that which has no force and effect, is without legal efficacy, is incapable of being enforced by law, or has no legal or binding force, but frequently the word is used and construed as having the more liberal meaning of `voidable'. The word `void' is used in statute in the sense of utterly void so as to be incapable of ratification, and also in the sense of voidable and resort must be had to the rules of construction in many cases to determine in which sense the legislature intended to use it. An act or contract neither wrong in itself nor against public policy, which has been declared void by statute for the protection or benefit of a certain party, or class of parties, is voidable only". (Pankan Mehra and Anr. v. State of Maharashtra and Ors. (2000 (2) SCC 756).

Per Fazal Ali, J- The meaning of the word "void" is stated in Black's Law Dictionary (3rd Edn.) to be as follows:

"Null and void; ineffectual;
nugatory; having no legal force or binding effect; unable in law to support the purpose for which it was intended; nugatory and ineffectual so that nothing can cure it; not valid". Keshavan Madhava Menon v. State of Bombay (1951 SCR 228).

The expression "void" has several facets. One type of void acts, transactions, decrees are those which are wholly without jurisdiction, ab initio void and for avoiding the same no declaration is necessary, law does not take any notice of the same and it can be disregarded in collateral proceeding or otherwise. Judicial Review of Administration Action, 5th Edn., para 5-044 (See also Judicial Remedies in Public Law at page 131; Dhurandhar Prasad Singh v. Jai Prakash University and Ors. (2001 (6) SCC 534) The other type of void act, e.g. may be transaction against a minor without being represented by a next friend. Such a transaction is a good transaction against the whole world. So far as the minor is concerned, if he decides to avoid the same and succeeds in

avoiding it by taking recourse to appropriate preceding the transaction becomes void from the very beginning. Another type of void act may be one, which is not a nullity, but for avoiding the same, a declaration has to be made. (See Government of Orissa v Ashok Transport Agency and Ors (2002 (9) SCC 28) The meaning to be given to the word "void" in Article 13 of the Constitution is no longer res integra, for the matter stands concluded by the majority decision of the Court in Keshavan Madhava Menon v. The State of Bombay (1951) SCR 228. We have to apply the ratio decidendi in that case to the facts of the present case. The impugned Act was a existing law at the time when the Constitution came into force. That existing law imposed on the exercise of the right guaranteed in the citizens of the India by Article 19(1)(g) restrictions which could not be justified as reasonable under clause (6) as it then stood and consequently under Article 13 (1) that existing Law became void "to the extent of such inconsistency". As explained in Keshavan Madhava Menon's case (supra) the Law became void in toto or for all purposes or for all times or for all persons but only "to the extent of such inconsistency", that is to say, to the extent it became inconsistent with the provisions of Part III which conferred the fundamental rights on the citizens. It did not become void independently of the existence of the rights guaranteed by Part III. (See Bhikaji Narain Dhakras and Ors. v. The State of Madhya Pradesh and Anr. (1955 (2) SCR 589).

The word "void" has a relative rather than an absolute meaning. It only conveys the idea that the order is invalid or illegal. In Halsbury's Laws of England, 4th Edn. (Re-issue) Vol. 1(1) in para 26, p.31 it is stated thus: "If an act of decision, or an order or other instrument is invalid, it should, in principle, be null and void for all purposes; and it has been said that there are no degrees of nullity. Even though such an act is wrong and lacking in jurisdiction, however, it subsists and remains fully effective unless and until it is set aside by a court of competent jurisdiction. Until its validity is challenged, its legality is preserved". (See State of Kerala v.

M.K. Kunhikannan Nambiar Manjeri Manikoth, Naduvil (dead) and ors. (1996 (1) SCC 435).

"Voidable act" is that which is a good act unless avoided, e.g. if a suit is filed for a declaration that a document is fraudulent, it is voidable as the apparent state of affairs is the real state of affairs and a party who alleges otherwise is oblige to prove it. If it is proved that the document is forged and fabricated and a declaration to that effect is given, a transaction becomes void from the very beginning. There may be voidable transaction which is

required to be set aside and the same is avoided from the day it is so set aside and not any day prior to it. In cases, where legal effect of a document cannot be taken away without setting aside the same, it cannot be treated to be void but would be obviously voidable. Government of Orissa v. Ashok Transport Agency and Ors. (2002 (9) SCC 28)".

55. इसी प्रकार माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा सिविल अपील संख्या 4481/2001 बउनवान ***Dhurandhar Prasad Singh vs Jai Prakash University*** में दिनांक 24.07. 2001 को दिये गये निर्णय में शून्य व शून्यकरणीय होने की संकल्पना/अवधारणा के संबंध में विवेचना की है। जिसके प्रासंगिक पैरा का उद्धरण निम्न प्रकार हैः–

The expressions void and voidable have been subject matter of consideration before English Courts times without number. In the case of Durayappah v. Fernando and others [1967] 2 All England Law Reports 152, the dissolution of municipal council by the minister was challenged. Question had arisen before the Privy Council as to whether a third party could challenge such a decision. It was held that if the decision was complete nullity, it could be challenged by anyone, anywhere. The Court observed at page 158 thus:-

The answer must depend essentially on whether the order of the Minister was a complete nullity or whether it was an order voidable only at the election of the council. If the former, it must follow that the council is still in office and that, if any councillor, ratepayer or other person having a legitimate interest in the conduct of the council likes to take the point, they are entitled to ask the court to declare that the council is still the duly elected council with all the powers and duties conferred on it by the Municipal Ordinance.

In the case of In re McC. (A minor) [1985] 1 Appeal Cases 528, the House of Lords followed the dictum of Lord Coke in the Marshalsea Case quoting a passage from the said judgment which was rendered in 1613 where it was laid down that where the whole proceeding is coram non judice which means void ab initio, the action will lie without any regard to the precept or process. The Court laid down at page 536 thus:-

Consider two extremes of a very wide spectrum. Jurisdiction meant one thing to Lord Coke in 1613 when he said in the Marshalsea Case (1613) 10 Co. Rep.68b, at p.76a:

when a court has jurisdiction of the cause, and, proceeds inverso ordine or erroneously, there the party who sues, or the officer or minister of the court who executes the precept or process of the court, no action lies against them. But when the court has not jurisdiction of the cause,

there the whole proceeding is coram non judice, and actions will lie against them without any regard of the precept or process.

The Court of the Marshalsea in that case acted without jurisdiction because, its jurisdiction being limited to members of the Kings household, it entertained a suit between two citizens neither of whom was a member of the Kings household. Arising out of those proceedings a party arrested by process of the Marshalsea could maintain an action for false imprisonment against, inter alios, the Marshal who directed the execution of the process. This is but an early and perhaps the most quoted example of the application of a principle illustrated by many later cases where the question whether a court or other tribunal of limited jurisdiction has acted without jurisdiction (coram non judice) can be determined by considering whether at the outset of the proceedings that court had jurisdiction to entertain the proceedings at all. So much is implicit in the Lord Cokes phrase jurisdiction of the cause.
In another decision, in the case of Director of Public Prosecutions v. Head [1959] Appeal Cases 83, House of Lords was considering validity of an order passed by Secretary of the State in appeal preferred against judgment of acquittal passed in a criminal case. The Court of Criminal Appeal quashed the conviction on the ground that the aforesaid order of Secretary was null and void and while upholding the decision of the Court of Criminal Appeal, the House of Lords observed at page 111 thus:-

This contention seems to me to raise the whole question of void or voidable: for if the original order was void, it would in law be a nullity. There would be no need for an order to quash it. It would be automatically null and void without more ado. The continuation orders would be nullities too, because you cannot continue a nullity. The licence to Miss Henderson would be a nullity. So would all the dealings with her property under Section 64 of the Act of 1913. None of the orders would be admissible in evidence. The Secretary of State would, I fancy, be liable in damages for all of the 10 years during which she was unlawfully detained, since it could all be said to flow from his negligent act; see section 16 of the Mental Treatment Act, 1930.

But if the original order was only voidable, then it would not be automatically void. Something would have to be done to avoid it. There would have to be an application to the High Court for certiorari to quash it.

This question was examined by Court of Appeal in the case of R. v. Paddington Valuation Officer and another, Exparte Peachey Property Corporation, Ltd. [1965] 2 All

England Law Reports 836 where the valuation list was challenged on the ground that the same was void altogether. On these facts, Lord Denning, M.R. laid down the law observing at page 841 thus:-

It is necessary to distinguish between two kinds of invalidity. The one kind is where the invalidity is so grave that the list is a nullity altogether. In which case there is no need for an order to quash it. It is automatically null and void without more ado. The other kind is when the invalidity does not make the list void altogether, but only voidable. In that case it stands unless and until it is set aside. In the present case the valuation list is not, and never has been, a nullity. At most the first respondent-acting within his jurisdiction-exercised that jurisdiction erroneously. That makes the list voidable and not void. It remains good until it is set aside.

De Smith, Woolf and Jowell in their treatise Judicial Review of Administrative Action, Fifth Edition, paragraph 5-044, has summarised the concept of void and voidable as follows: Behind the simple dichotomy of void and voidable acts (invalid and valid until declared to be invalid) lurk terminological and conceptual problems of excruciating complexity. The problems arose from the premise that if an act, order or decision is ultra vires in the sense of outside jurisdiction, it was said to be invalid, or null and void. If it is intra vires it was, of course, valid. If it is flawed by an error perpetrated within the area of authority or jurisdiction, it was usually said to be voidable; that is, valid till set aside on appeal or in the past quashed by certiorari for error of law on the face of the record. Clive Lewis in his works Judicial Remedies in Public Law at page 131 has explained the expressions void and voidable as follows:-

A challenge to the validity of an act may be by direct action or by way of collateral or indirect challenge. A direct action is one where the principal purpose of the action is to establish the invalidity. This will usually be by way of an application for judicial review or by use of any statutory mechanism for appeal or review. Collateral challenges arise when the invalidity is raised in the course of some other proceedings, the purpose of which is not to establish invalidity but where questions of validity become relevant.

Thus the expressions void and voidable have been subject matter of consideration on innumerable occasions by courts. The expression void has several facets. One type of void acts, transactions, decrees are those which are wholly without jurisdiction, ab initio void and for avoiding the same no declaration is necessary, law does not take

any notice of the same and it can be disregarded in collateral proceeding or otherwise. The other type of void act, e.g., may be transaction against a minor without being represented by a next friend. Such a transaction is good transaction against the whole world. So far the minor is concerned, if he decides to avoid the same and succeeds in avoiding it by taking recourse to appropriate proceeding the transaction becomes void from the very beginning. Another type of void act may be which is not a nullity but for avoiding the same a declaration has to be made. Voidable act is that which is a good act unless avoided, e.g., if a suit is filed for a declaration that a document is fraudulent and/or forged and fabricated, it is voidable as apparent state of affairs is real state of affairs and a party who alleges otherwise is obliged to prove it. If it is proved that the document is forged and fabricated and a declaration to that effect is given a transaction becomes void from the very beginning. There may be a voidable transaction which is required to be set aside and the same is avoided from the day it is so set aside and not any day prior to it. In cases, where legal effect of a document cannot be taken away without setting aside the same, it cannot be treated to be void but would be obviously voidable.

56. प्रकरण में शून्य व शून्यकरणीय होने की संकल्पना/अवधारणा की अवधारणा को समझने के पश्चात पंजीकृत दस्तावेज के शून्य व शून्यकरणीय होने के आधार पर सिविल न्यायालय एवं राजस्व न्यायालय के क्षेत्राधिकार के विवाद के संबंध में कानूनन स्थिति की स्पष्टता को समझना आवश्यक है। इस संबंध में माननीय राजस्थान उच्च न्यायालय जयपुर द्वारा सिविल प्रथम अपील संख्या 330/2010 बउनवान ***Ram Kripal Dasji Charitable Trust vs Phool Chand*** में दिनांक 29.02.2012 को दिये गये निर्णय में पंजीकृत दस्तावेज के शून्य व शून्यकरणीय होने के आधार पर सिविल न्यायालय एवं राजस्व न्यायालय के क्षेत्राधिकार के विवाद के संबंध में विवेचना की है। जिसके प्रासंगिक पैरा का उद्धरण निम्न प्रकार हैः–

11. (......)

(vi) It is well settled that the question of jurisdiction namely whether a suit is exclusively triable by a revenue court or a Civil Court can take cognizance of it has to be decided on the allegations made in the plaint. It is also further settled that it is the substance of the plaint and the true nature of the suit that is to be seen to determine the question of jurisdiction. If in substance the relief claimed is one which the revenue court alone is entitled to give, the jurisdiction of the civil court will be ousted even though it may require the revenue court to incidentally determine some ancillary facts. In order to determine the true nature of the relief claimed in a suit, the pith and substance and not the form in which the relief may be couched has to be considered. Each case has to be examined on its own particular facts and no universal rule can be applicable to every case.

xxx

In my view unless a clear finding to that effect is given, the relief claimed by the appellant cannot be granted. Under the provisions of Rajasthan Tenancy Act, declaration and permanent injunction regarding an agricultural land can be granted only by a revenue court. It cannot be disputed that a suit for declaration of tenancy rights regarding an agricultural land has to be filed under Section 88 whereas a suit for permanent injunction has to be filed under Section 188 of the Rajasthan Tenancy Act. Section 207 of the Rajasthan Tenancy Act provides that all suits of the nature specified in the III Schedule of the Act shall be heard and determined by a revenue court and no court other than a revenue court shall take cognizance of any such suit. A suit for declaration finds place in Item No.5 whereas suit for permanent injunction finds place in Item No.23 C of the III Schedule. It is thus, very much clear that the present suit was clearly barred by law as Section 207 of the Rajasthan Tenancy Act bars such a suit from being taken cognizance and considered by a court other than a revenue court. The learned trial Court has rightly arrived at a conclusion that the suit is not entertainable by a civil Court.

57. इसी प्रकार माननीय राजस्थान उच्च न्यायालय जोधपुर द्वारा सिविल रिवीजन संख्या 137/2015 बउनवान ***Hasti Cement Pvt. Ltd. & Anr vs Sandeep Charan*** में दिनांक 07.03.2018 को दिये गये निर्णय में पंजीकृत दस्तावेज के शून्य व शून्यकरणीय होने के आधार पर सिविल न्यायालय एवं राजस्व न्यायालय के क्षेत्राधिकार के विवाद के संबंध में विवेचना की है। जिसके प्रासंगिक पैरा का उद्धरण निम्न प्रकार हैः–

From what has been noticed hereinbefore, it can be safely concluded that if the allegation in the plaint/substance of the allegations in the plaint allege the instrument to be void and no cancellation is required and without seeking such cancellation the relief of declaration pertaining to tenancy rights with regard to the agricultural land in question can be obtained by the plaintiff, only the revenue courts would have jurisdiction to deal with the subject matter of the suit and consequently the jurisdiction of civil courts would be barred. However, if the allegations made in the plaint make out a case of document being voidable, relief of cancellation of such a voidable document can only be granted by civil court and irrespective of the fact that the instrument pertains to agricultural land, the suit would not be barred under Section 207 of the Tenancy Act. Therefore, the trial court in each case, where a issue in this regard is raised, based on the stage of the suit i.e. either based on the plaint averments or the evidence available on record would have to come to a conclusion as to whether the facts as alleged, if established or as established in a case where evidence has been led makes the instrument void or voidable and decide accordingly.

The fact that even in a case of a void document a relief of declaration in this regard has been sought, as laid down in the case of Rukmani (supra) once the declaration about status of Tenancy rights is granted, the consequential relief to the effect that the instrument in question is void and ineffective can always be granted by the revenue court.

58. इस प्रकार उपरोक्त न्यायिक दृष्टांतों के अवलोकन से विवादित संपति पर खातेदारी अधिकार निहित होने व विवादित संपति का पंजीकृत दस्तावेज द्वारा अंतरण किए जाने की स्थिति में राजस्व न्यायालय व सिविल न्यायालय के क्षेत्राधिकार के मध्य संशय की स्थिति को स्पष्ट करते हुए निम्न प्रकार कानूनन स्थिति स्पष्ट की गई है:–

1. *पंजीकृत दस्तावेज के आरंभ से शून्य होने की स्थिति में राजस्व न्यायालय से अनुतोष प्राप्त किया जा सकता है। साथ ही पंजीकृत दस्तावेज के शून्यकरणीय होने की स्थिति में केवल सिविल न्यायालय का क्षेत्राधिकार होता है।*
2. *अगर वादपत्र में विवादित संपति के अंतरण के पंजीकृत दस्तावेज को निरस्त करवाने का मुख्य अनुतोष है तथा अन्य अनुतोष आनुषांगिक है उस स्थिति में केवल सिविल न्यायालय का क्षेत्राधिकार होता है।*
3. *अगर वादपत्र में विवादित संपति पर खातेदारी अधिकार की घोषणा का अनुतोष मुख्य अनुतोष है तथा विवादित संपति के अंतरण के पंजीकृत दस्तावेज को निरस्त करवाने का आनुषांगिक अनुतोष है उस स्थिति में केवल राजस्व न्यायालय का क्षेत्राधिकार होता है।*

59. इसी प्रकार माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा सिविल अपील संख्या 1269–1270/2019 बउनवान ***Pyarelal vs Shubhendra Pilania (Minor)*** में दिनांक 29.01.2019 को दिये गये निर्णय में पंजीकृत दस्तावेज के शून्य व शून्यकरणीय होने के आधार पर सिविल न्यायालय एवं राजस्व न्यायालय के क्षेत्राधिकार के विवाद के संबंध में विवेचना की है। जिसके प्रासंगिक पैरा का उद्धरण निम्न प्रकार है:–

11 Section 9 of the Code of Civil Procedure provides thus:

"9. Courts to try all civil suits unless barred - The Courts shall (subject to the provisions herein contained) have jurisdiction to try all suits of a civil nature excepting suits of which their cognizance is either expressly or impliedly barred.
Explanation I - A suit in which the right to property or to an office is contested is a suit of a civil nature, notwithstanding that such right

may depend entirely on the decision of questions as to religious rites or ceremonies.
Explanation ll - For the purposes of this section, it is immaterial whether or not any fees are attached to the office referred to in Explanation I or whether or not such office is attached to a particular place." Section 9 empowers civil courts to try all suits of a civil nature unless expressly or impliedly barred by any statute.

12 Section 256 of the Tenancy Act provides thus:

"256. Bar to jurisdiction of civil courts — (i) Save as otherwise provided specifically by or under this Act, no suit or proceeding shall lie in any civil court with respect to any matter arising under this Act or the rules made thereunder, for which a remedy by way of suit, application, appeal or otherwise is provided therein.
(2) Save as aforesaid no order passed by the State Government or by any revenue court or officer in exercise of the powers conferred by this Act or the rules made thereunder, shall be liable to be questioned in any civil court." Section 256 bars the jurisdiction of civil courts, save as otherwise provided under the Tenancy Act. Civil courts are expressly barred from trying a suit or proceeding with respect to matters arising under the Tenancy Act or rules made under it for which a remedy by way of a suit, application, appeal or otherwise is provided in the Tenancy Act.

13 Section 207 of the Tenancy Act provides thus:

"207. Suits and applications cognizable by revenue court only— (1) All suits and applications of the nature specified in the Third Schedule shall be heard and determined by a revenue court.
(2) No court other than a revenue court shall take cognizance of any such suit or application or of any suit or application based on a cause of action in respect of which any relief could be obtained by means of any such suit or application.
Explanation.— If the cause of action is one in respect of which relief might be granted by the revenue court, it is immaterial that the relief asked for from the civil court is greater than, or additional to, or is not identical with, that

which the revenue court could have granted." Section 207 of the Tenancy Act states that no court other than a revenue court shall take cognizance of suits and applications of the nature specified in the Third Schedule. Such suits can be heard and determined by a revenue court which has exclusive jurisdiction. The explanation clarifies that if the cause of action is one in respect of which relief may be granted by the revenue court, then it is immaterial that a relief sought from the civil court is greater than, in addition to or not identical to the relief sought from the revenue court. Where a suit is of a nature specified in any of the provisions of the Third Schedule, the bar under Section 256 is attracted and the revenue courts have exclusive jurisdiction to try the suit.

14 In Bank of Baroda v Moti Bhai4, a two judge Bench of this Court dealt with the question of jurisdiction under Sections 207 and 256 of the Tenancy Act. A bank had sanctioned a demand loan facility to the respondent for which the respondent executed a promissory note and a simple mortgage in favour of the bank. On his failure to repay the loan, the Bank instituted a suit in the civil court for recovery. The respondent raised a preliminary objection that the suit was essentially one for enforcing the mortgage and that the revenue court had the exclusive jurisdiction to entertain the suit by reason of the provisions contained in the Tenancy Act. The Trial court dismissed the objection. Allowing the revision filed by the respondent, the High Court held that that the mortgage deed in respect of agricultural lands formed an essential part of the cause of action. Upon an analysis of Sections 207 and 256 of the Tenancy Act, a two judge Bench of this Court set aside the judgment of the High Court with the following reasons:

"5. A combined reading of these two sections would show that the jurisdiction of civil courts is barred only in respect of suits and applications of the nature specified in the Third Schedule to the Act and in respect of suits or applications based on a cause of action in respect of which any relief could be obtained by means of a suit or application of the nature specified in the Third Schedule. The civil court has no jurisdiction to entertain a suit or proceeding with respect to any matter arising under the Act or the Rules made thereunder, provided that a remedy by way of a suit, application or appeal or otherwise is provided in the Act.

A loan given by a Bank to an agriculturist, which is in the nature of a commercial transaction, is outside the contemplation of the Act and can, by no stretch of imagination, be said to be in respect of any matter arising under the Act… The business of the Bank, in so far as lending transactions are concerned, is not to lend moneys on mortgages but the business is to lend moneys.

8. On the question of jurisdiction, one must always have regard to the substance of the matter and not to the form of the suit. If the matter is approached from that point of view, it would be clear that, primarily and basically, the suit filed by the Bank is one for recovering the amount which is due to it from the respondents on the basis of the promissory note executed by respondent 1 and the guarantee given by respondents 2 and 3." (Emphasis supplied) Section 207 read with Section 256 of the Tenancy Act bars the jurisdiction of the civil courts in respect of suits and applications of the nature specified in the Third Schedule to the Act. The question before us is whether the relief claimed by the appellant can be granted exclusively by a revenue court under the provisions of the Tenancy Act.

15 Section 88 of the Tenancy Act provides thus:

> *"88. Suits for declaration of right:- (1) Any person claiming to be a tenant or a co-tenant may sue for a declaration that he is a tenant or for a declaration of his share in such joint tenancy.*
> *(2) A tenant of Khudkasht may sue for a declaration that he is such a tenant.*
> *(3) A sub-tenant may sue the person from whom he holds for declaration that he is a sub-tenant. (4) A landholder other than a State Government may sue a person claiming to be a tenant or co-tenant of a holding or a tenant of Khudkasht or a sub-tenant for a declaration of the right of such person."*

Sl. No. 5 of the Third Schedule provides thus:

"THE THIRD SCHEDULE Suits, Applications and Appeals under the Act (See Sections 207, 214, 215 & 217) S. Section Description of suit, application or Period of Time Proper Court/ No. of Act appeal limitation from Court Fees Officer which competent period to dispose begins to of run

"THE THIRD SCHEDULE
Suits, Applications and Appeals under the Act
(See Sections 207, 214, 215 & 217)

S.No.	Section of Act	Description of suit, application or appeal	Period of limitation	Time from which period begins to run	Proper Court Fees	Court/Officer competent to dispose of
5.	88	Suit for declaration of the plaintiffs right :- (i) as a tenant, or (ii) as a tenant of khudkasht, or (iii) as a sub-tenant, or (iv) for a share in a joint tenancy		None	One rupee	Assistant Collector

> *Sl. No. 5 in the Third Schedule read with Section 207 of the Tenancy Act stipulates that a suit for the declaration of a right provided in Section 88 would lie before a revenue court. In a suit where the relief sought for is the declaration of the right stipulated in Section 88, Sections 207 and 256 read with the Third Schedule bar the jurisdiction of civil courts and vest jurisdiction exclusively with a revenue court.*

60. इस प्रकार उपरोक्त न्यायिक दृष्टांतों के अवलोकन से विवादित संपति पर खातेदारी अधिकार निहित होने व विवादित संपति का पंजीकृत दस्तावेज द्वारा अंतरण किए जाने की स्थिति में राजस्व न्यायालय व सिविल न्यायालय के क्षेत्राधिकार के मध्य संशय की स्थिति को स्पष्ट करते हुए निम्न प्रकार कानूनन स्थिति स्पष्ट की गई है:—

    1. *राजस्व न्यायालय से विवादित संपति पर खातेदारी अधिकार की घोषणा प्राप्त करने के पश्चात ही विवादित संपति के अंतरण के पंजीकृत दस्तावेज को निरस्त करवाने बाबत सिविल न्यायालय में अनुतोष प्राप्त किया जा सकता है।*

61. इस प्रकार उपरोक्त न्यायिक दृष्टांत के अवलोकन से स्पष्ट है कि अगर वादपत्र में विवादित संपति पर खातेदारी अधिकार की घोषणा का अनुतोष मुख्य अनुतोष है तथा विवादित संपति के अंतरण के पंजीकृत दस्तावेज को निरस्त करवाने का आनुषांगिक अनुतोष है उस स्थिति में केवल राजस्व न्यायालय का क्षेत्राधिकार होता है। उक्त विधि की स्थिति के संबंध में प्रकरण के तथ्यों का विश्लेषण किया जाना अपेक्षित हैं।

62. प्रकरण में तनकी संख्या 01 वादी के पक्ष में फैसल की गई है। इस आधार पर हिन्दु उत्तराधिकार अधिनियम—1956 की धारा—08 के तहत गुणेशा की सम्पति में विरासत में वादी व प्रतिवादी संख्या 01—04 के प्रथम श्रेणी के वारिस होने के आधार पर मुतनाजा आराजी में वादी का 1/6 हिस्सा तथा प्रतिवादी संख्या 01—04 प्रत्येक का 1/6—1/6 हिस्सा तथा मीरो पत्नी गुणेशा का 1/6 हिस्सा निहित है। इस कारण मुतनाजा आराजी पर बेचानकर्ता मीरो पत्नी गुणेशा का 1/6 हिस्सा व चतरसिंह पुत्र गुणेशा का 1/6 हिस्सा निहित रहा है। इस आधार पर खसरा संख्या 209 मौजा आलपुरा रकबा 06 बीघा 06 बिस्वा में प्रतिवादी चतरसिंह पुत्र गुणेशा के हिस्से में 01 बीघा आराजी पर हक निहित होते हैं। प्रकरण में चतरसिंह पुत्र गुणेशा

व मीरो पत्नी गुणेशा द्वारा अपनी आराजी का अंतरण किया गया है। तनकी संख्या 03 व 04 में प्रतिवादी संख्या 01 द्वारा खसरा संख्या 209 मौजा आलपुरा रकबा 06 बीघा 06 बिस्वा में से बयनामा दिनांक 20.11.2024 के द्वारा 02 बीघा भूमि का अंतरण किया गया है। इस प्रकार प्रतिवादी चतरसिंह द्वारा खसरा संख्या 209 मौजा आलपुरा रकबा 06 बीघा 06 बिस्वा में से अपने हक हिस्से की आराजी 01 बीघा से अधिक आराजी 02 बीघा का अंतरण किया गया है।

63. यहां उल्लेखनीय है कि प्रतिवादी चतरसिंह व मीरो पत्नी गुणेशा द्वारा खसरा संख्या 209 मौजा आलपुरा में से दिनांक 10.10.2012 को पंजीबद्ध बयनामा से 01 बीघा आराजी पूर्व में अंतरित कर दी गई है। जिसका पृथक से खाता कायम करते हुए खसरा संख्या 209/3 रकबा 01 बीघा क्रेता को प्रदान किया गया है।

64. यहा उल्लेखनीय है कि खसरा संख्या 209 रकबा 06 बीघा 06 बिस्वा में से चतरसिंह को 01 बीघा तथा मीरों पत्नी गुंणेशा का 01 बीघा भूमि हिस्से में आती है। जबकि पंजीबद्ध बयनामा दिनांक 10.10.2012 के द्वारा प्रतिवादी संख्या 01 चतरसिंह व मीरों पत्नी गुणेशा द्वारा खसरा संख्या 209 रकबा 06 बीघा 06 बिस्वा में से 01 बीघा आराजी का बेचान किया गया है। उक्त पंजीबद्ध बयनामा दिनांक 10.10.2012 के द्वारा किये गये अन्तरण के पश्चात खसरा संख्या 209 में चतरसिह की 1/2 बीघा तथा मीरों पत्नी गुणेशा की 1/2 बीघा आराजी शेष बचती है। तत्पश्चात् मीरों पत्नी गुणेशा की फौत होने से खसरा संख्या 209 में मीरों पत्नी गुणेशा का 1/2 बीघा की आराजी विरासत में वादी व प्रतिवादी संख्या 01–04 को प्राप्त होना विधिसंगत है। इस प्रकार मीरों पत्नी गुणेशा की फौत होने से खसरा संख्या 209 में मीरों पत्नी गुणेशा का 10 बिस्वा की आराजी विरासत में वादी व प्रतिवादी संख्या 01–04 प्रत्येक को 1/5 हिस्सा अर्थात 02–02 बिस्वा आराजी प्राप्त होना विधिसंगत है। इस प्रकार खसरा संख्या 209 में प्रतिवादी चतरसिह के हक हिस्से की कुल 13 बिस्वा आराजी शेष रहती है। इस प्रकार खसरा संख्या 209 में प्रतिवादी चतरसिह के द्वारा किये गये द्वितीय बेचान दिनांक 20.11.2024 द्वारा कुल आराजी का 02 बीघा रकबा का बेचान किया गया है। जबकि उक्त खसरा संख्या 209 में चतरसिह को अपना शेष रकबा 13 बिस्वा को ही बेचान करने का अधिकार था। इस प्रकार द्वितीय बेचान दिनांक 20.11.2024 केवल 13 बिस्वा भूमि का अन्तरण का अधिकार निहित होने के कारण केवल 13 बिस्वा भूमि के अन्तरण तक ही वैद्यता रखता है। इस प्रकार उक्त खसरा संख्या 209 पर प्रतिवादी संख्या 06 केवल 12 बिस्वा आराजी पर खातेदारी प्राप्त करने के अधिकारी है।

65. इस आधार पर प्रकरण में द्वितीय पंजीबद्ध बेचान दिनांक 20.11.2024 के द्वारा अपने अधिकार से अधिक आराजी का बेचान किये जाने से उक्त बेचान दिनांक 20.11.2024 आरम्भ से ही शून्य, अवैध व निष्प्रभावी प्रतीत होता है। इस कारण प्रतिवादी संख्या 06 का आरम्भ से ही शून्य, अवैध व निष्प्रभावी पंजीबद्ध बयनामा दस्तावेज दिनांक 20.11.2024 के आधार पर मुतनाजा आराजी पर कोई अधिकार प्रतीत नहीं होते हैं। इस प्रकार प्रतिवादी अपने उपर आरोपित तथ्य के प्रमाणन के भार (Onus of Proof) को निर्वहन करने में असफल रहा है। इससे प्रमाणन का भार (Onus of Proof) वादी के उपर स्थानांतरित नहीं होता है। जबकि वादी के उपर आरोपित प्रमाणन का भार (Onus of Proof) को निर्वहन करने में वादी सफल रहे है। इससे

प्रमाणन का भार (Onus of Proof) वापस प्रतिवादी के उपर स्थानांतरित होता है। इस प्रकार प्रतिवादी तनकी संख्या 03 व 04 को साबित (Burden of Proof) करने में असफल रहे है। इस प्रकार उक्त तनकी संख्या 03 व 04 प्रतिवादी संख्या 06 के पक्ष में आंशिक रूप से फैसल की जाती है।

66. प्रकरण में अब तनकी संख्या 07 पर विश्लेषण किया जाना अपेक्षित है। प्रकरण मे तनकी संख्या 07 निम्न प्रकार हैः—

> *7. आया मुतनाजा आराजी पर प्रतिवादी संख्या 08 द्वारा दिनांक 10.10.2012 को जरिये पंजीबद्ध बयनामा खसरा संख्या 209/3 में से 1 बीघा भूमि को खरीद करने तथा नामांतरण संख्या 1207 दिनांक 20.10.2012 द्वारा प्रतिवादी संख्या 08 की उक्त 1 बीघा भूमि का अलग से खाता कायम करने के कारण प्रतिवादी संख्या 08 की उक्त 01 बीघा भूमि को मुतनाजा आराजी व डिक्री से पृथक रखा जाना उचित है।*
>
> *............................प्रतिवादी संख्या 08*

67. प्रकरण में तनकी संख्या 07 मुतनाजा आराजी पर पंजीबद्ध बयनामा दिनांक 10.10.2012 के द्वारा अंतरित की गई 01 बीघा आराजी पर वादी का कोई अधिकार नहीं होने से संबंधित है। इस संबंध में उल्लेखनीय है कि प्रकरण में तनकी संख्या 01 वादी के पक्ष में फैसल की गई है। इस आधार पर हिन्दु उत्तराधिकार अधिनियम—1956 की धारा—08 के तहत गुणेशा की सम्पति में विरासत में वादी व प्रतिवादी संख्या 01—04 के प्रथम श्रेणी के वारिस होने के आधार पर मुतनाजा आराजी में वादी का 1/6 हिस्सा तथा प्रतिवादी संख्या 01—04 प्रत्येक का 1/6—1/6 हिस्सा तथा मीरो पत्नी गुणेशा का 1/6 हिस्सा निहित है। इस कारण मुतनाजा आराजी पर बेचानकर्ता मीरो पत्नी गुणेशा का 1/6 हिस्सा व चतरसिंह पुत्र गुणेशा का 1/6 हिस्सा निहित रहा है। इस आधार पर खसरा संख्या 209 मौजा आलपुरा रकबा 06 बीघा 06 बिस्वा में प्रतिवादी चतरसिंह पुत्र गुणेशा के हिस्से में 01 बीघा तथा मीरो पत्नी गुणेशा के हिस्से में 01 बीघा आराजी पर हक निहित होते हैं। प्रकरण में चतरसिंह पुत्र गुणेशा व मीरो पत्नी गुणेशा द्वारा अपनी आराजी का अंतरण किया गया है। उक्त तनकी संख्या 07 में प्रतिवादी संख्या 01 व मीरो पत्नी गुणेशा द्वारा खसरा संख्या 209 मौजा आलपुरा रकबा 06 बीघा 06 बिस्वा में से बयनामा दिनांक 10.10.2012 के द्वारा 01 बीघा भूमि का अंतरण किया गया है। इस प्रकार प्रतिवादी संख्या 01 व मीरो पत्नी गुणेशा द्वारा खसरा संख्या 209 मौजा आलपुरा रकबा 06 बीघा 06 बिस्वा में से बयनामा दिनांक 10.10.2012 के द्वारा 01 बीघा भूमि का अंतरण किया गया है। उक्त प्रतिवादी संख्या 01 व मीरो पत्नी गुणेशा द्वारा खसरा संख्या 209 मौजा आलपुरा रकबा 06 बीघा 06 बिस्वा में से बयनामा दिनांक 10.10.2012 के द्वारा 01 बीघा भूमि का अंतरण चतरसिंह व मीरो पत्नी गुणेशा के हिस्से के अंतर्गत ही प्रतीत होता है।

68. यहां उल्लेखनीय है कि प्रतिवादी संख्या 01 व मीरो पत्नी गुणेशा द्वारा खसरा संख्या 209 मौजा आलपुरा रकबा 06 बीघा 06 बिस्वा में से बयनामा दिनांक 10.10.2012 के द्वारा 01 बीघा भूमि का अंतरण कर दी गई है। जिसका पृथक से खाता कायम करते हुए खसरा संख्या 209/3 रकबा 01 बीघा क्रेता को प्रदान किया गया है। इस आधार पर प्रकरण में प्रथम पंजीबद्ध बेचान दिनांक 10.10.2012 के द्वारा

अपने अधिकार से अधिक आराजी का बेचान नहीं किये जाने व अपने हक हिस्से के अंतर्गत ही आराजी का बेचान करने से उक्त बेचान दिनांक 10.10.2012 आरम्भ से ही शून्य, अवैध व निष्प्रभावी नहीं है। क्योंकि चतरसिंह व मीरो पत्नी गुणेशा को विरासत से प्राप्त अपने हक की हद तक सम्पत्ति का अपनी स्वेच्छा से निस्तारण करने का पूर्ण अधिकार है। इस कारण प्रतिवादी संख्या 08 का वैध पंजीबद्ध बयनामा दस्तावेज दिनांक 10.10.2012 के आधार पर मुतनाजा आराजी पर खातेदारी अधिकार को चुनौती दिया जाना विधिसंगत नहीं हैं। इस प्रकार प्रतिवादी अपने उपर आरोपित तथ्य के प्रमाणन के भार (Onus of Proof) को निर्वहन करने में सफल रहा है। इससे प्रमाणन का भार (Onus of Proof) वादी के उपर स्थानांतरित होता है। जबकि वादी द्वारा पंजीबद्ध बयनामा दिनांक 10.10.2012 को आरम्भ से शून्य, अवैध व निष्प्रभावी होने के संबंध में कोई दस्तावेजी व कानूनी साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किये जाने के कारण वादी के उपर आरोपित प्रमाणन का भार (Onus of Proof) को निर्वहन करने में वादी असफल रहे है। इससे प्रमाणन का भार (Onus of Proof) वापस प्रतिवादी के उपर स्थानांतरित नहीं होता है। इस प्रकार वादी तनकी संख्या 07 को साबित (Burden of Proof) करने में सफल रहे है। इस प्रकार उक्त तनकी संख्या 07 प्रतिवादी संख्या 08 के पक्ष में फैसल की जाती है।

69. प्रकरण में अब तनकी संख्या 02 व 06 पर विश्लेषण किया जाना अपेक्षित है। प्रकरण मे तनकी संख्या 02 व 06 निम्न प्रकार हैः–

2. आया वादी हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम–1956 के तहत गुणेशा पुत्र पना के विधिक वारिश होने के आधार पर मौजा आलपुरा की मुतनाजा आराजी खसरा संख्या 113 में 1/5 हिस्सा, खसरा संख्या 201/1, 201/2 में से 02–05 बीघा तथा खसरा संख्या 209, 209/3 में 1/5 हिस्सा की खातेदारी अधिकारों की घोषणा प्राप्त करने के आधार पर विरूद्ध प्रतिवादी मुताबिक वादपत्र वर्णित अनुतोष स्थायी निषेधाज्ञा प्राप्त करने के अधिकारी है।

............................वादी

6. आया मुतनाजा आराजी पर प्रतिवादी संख्या 06 की खातेदारी अधिकारों की घोषणा तथा खाता विभाजन के आधार पर विरूद्ध वादी मुताबिक वादपत्र वर्णित अनुतोष स्थायी निषेधाज्ञा प्राप्त करने के अधिकारी है।

............................प्रतिवादी संख्या 06

70. प्रकरण का अवलोकन करने पर प्रतीत होता है कि तनकी संख्या 02 व 06 स्थाई निषेधाज्ञा से संबंधित है। प्रकरण में उक्त तनकी के विवेचन हेतु तथ्यों का गहन विश्लेषण से पूर्व राजस्थान काश्तकारी अधिनियम–1955 की धारा–188 का उद्धरण यहाॅ प्रतीत होता है। जो कि निम्न प्रकार हैः–

188. Injunction against wrongful ejectment—

(1) Any tenant whose right to or enjoyment of the whole or a part of his holding is invaded or threatened to be invaded by his landholder or any other person may bring a suit for the grant of a perpetual injunction.

(2) The court may after making the necessary enquiry grant a perpetual injunction in the following cases, namely-

(a) if there exist no standard for ascertaining the actual damage caused or likely to be caused by the invasion;

(b) if the invasion is such that pecuniary compensation does not afford adequate relief;

(c) where it is probable that pecuniary compensation cannot be got for the invasion.
(d) where the injunction is necessary to prevent a multiplicity of proceedings.

71. उक्त राजस्थान काश्तकारी अधिनियम–1955 की धारा–188 के अवलोकन से स्पष्ट है कि धारा–188 के अन्तर्गत किसी खातेदारी आराजी पर खातेदारी अधिकारो की आमदरफत में किसी प्रकार का व्यवधान/अतिक्रमण किया जा रहा हो/किया जाने वाला हो उस स्थिति में व्यवधान उत्पन्न/अतिक्रमण करने वाले व्यक्ति को स्थाई निषेधाज्ञा से पाबंद किए जाने के प्रावधान बनाए गए है। राजस्थान काश्तकारी अधिनियम–1955 की धारा–188 की उपधारा–2 में स्थाई निषेधाज्ञा जारी किए जाने हेतु निम्न चार परिस्थितियां बताई गई हैः–

परिस्थिति	विवरण
1.	जब हो रहे/होने वाले संभावित अतिक्रमण/व्यवधान/घुसपैठ से होने वाले नुकसान के आंकलन हेतु कोई मानक/मापदण्ड अस्तित्व में नहीं हो।
2.	जब अतिक्रमण/व्यवधान/घुसपैठ इस प्रकार का हो कि नुकसान की आर्थिक भरपाई/क्षतिपूर्ति पर्याप्त राहत/संतुष्टि प्रदान नहीं करता हो।
3.	जब इस तथ्य की संभावना हो कि अतिक्रमण/व्यवधान/घुसपैठ से होने वाले नुकसान की आर्थिक भरपाई/क्षतिपूर्ति की प्रदानगी संभव नहीं होगी।
4.	जब निषेधाज्ञा राजस्व विवादों की बहुलता को रोकने हेतु आवश्यक हो।

72. इस प्रकार स्पष्ट है कि प्रकरण में पत्रावली के अवलोकन के अनुसार स्पष्ट है कि प्रकरण में तनकी संख्या 01 वादीगण के पक्ष में सशर्त स्वीकार होने के पश्चात् मुतनाजा आराजी पर वादीगण का संयुक्त काश्तकार घोषित होने के आधार पर वादीगण की संयुक्त खातेदारी होना पूर्ण रूप से साबित होती है। अतः मुतनाजा आराजी पर मुताबिक हिस्सा वादीगण का संयुक्त स्वामित्व अविवादित है। परंतु राजस्व रिकॉर्ड में संयुक्त खातेदारी होने से उभयपक्षकारान के किसी निश्चित भू–भाग पर बिना विधिक विभाजन करवाये कब्जे के बारे में कथन किया जाना कानूनन अनुचित है। इस कारण मुतनाजा आराजी पर उभयपक्षकारान की संयुक्त खातेदारी आराजी होने के कारण उभयपक्षकारान के किसी निश्चित भू–भाग पर बिना विधिक विभाजन करवाये कब्जे के बारे में संशय होने के कारण किसी प्रकार के नुकसान/क्षति का आंकलन करना तथा नुकसान/क्षति की पूर्ति किया जाना असंभव होने के आधार पर स्थाई निषेधाज्ञा हेतु प्रकरण का बनना स्पष्ट नहीं है। इस तनकी के संबंध में वादीगण उक्त प्रमाणन के भार (Onus of Proof) को निष्पादित करने में असफल रहे हैं। इस प्रकार प्रमाणन के भार (Onus of Proof) अब प्रतिवादी के उपर स्थानांतरित नहीं होता है। साथ ही प्रतिवादी उक्त तथ्य के प्रमाणन के भार (Onus of Proof) को निर्वहन करने में असफल रहा है। इससे अब प्रमाणन का भार (Onus of Proof) वादी के उपर स्थानांतरित नहीं होता है। इस प्रकार उभयपक्षकारान अपना प्रकरण साबित करने (Burden of Proof) में असफल रहे हैं। अतः तनकी संख्या 02 व 06 उभयपक्षकारान के विरूद्ध निर्णित की जाती है।

73. प्रकरण में तनकी संख्या 05 का अनुतोष प्रतिवादी द्वारा प्रत्याहारित किये जाने के कारण पृथक से विश्लेषण अपेक्षित नहीं है। निष्कर्षतः प्रकरण में हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम–1956 की धारा–08 व 09 अनुसार हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम–1956 की अनुसूची के वर्ग–01 के वारिसों के मध्य संपत्ति के न्यागमन होने की स्थिति में स्व0 गुणेशा पुत्र पना के प्रथम श्रेणी की वारिस वादीगण व प्रतिवादी संख्या 01–04 को ही गुणेशा पुत्र पना का उक्त संपत्ति में 1/6 हिस्सा वादी तथा प्रतिवादी संख्या 01–04 का प्रत्येक का 1/6–1/6 हिस्सा के अनुसार न्यागत होना विधिसंगत है। अतः वादी के पिता स्व0 गुणेशा पुत्र पना की सम्पत्ति में वादीगण व प्रतिवादी संख्या 01–04 के हित व अधिकार निहित हैं। परंतु वादीगण मुतनाजा आराजी का पंजीबद्ध बयनामा दिनांक 10.10.2012 के द्वारा 01 बीघा भूमि के किये गये अंतरण को निरस्त करवाने के अधिकारी नहीं हैं। परंतु वादी पंजीबद्ध बयनामा दिनांक 10.10.2012 के अतिरिक्त अन्य पंजीबद्ध बयनामा के आरम्भ से शून्य, अवैध व निष्प्रभावी होने के आधार पर दस्तावेजों के शून्य घोषित करवाने के अधिकारी हैं।

74. इस प्रकार उक्त खसरा संख्या 209 पर प्रतिवादी संख्या 06 केवल 13 बिस्वा आराजी पर खातेदारी प्राप्त करने के अधिकारी है। साथ ही वादी मुतनाजा आराजी पर अपने हिस्से की आराजी का बिना विधिक विभाजन करवाये स्थाई निषेधाज्ञा प्राप्त करने के अधिकारी नहीं हैं। इस प्रकार मुतनाजा आराजी का पंजीबद्ध बयनामा दिनांक 10.10.2012 के द्वारा 01 बीघा भूमि के किये गये अंतरण के अतिरिक्त शेष पंजीबद्ध बयनामा को शून्य करते हुए मुतनाजा आराजी में से वादी को कुल आराजी में निहित अपने 1/6 हिस्से की आराजी का अधिकारी घोषित किया जाना उचित प्रतीत होता है। इस प्रकार पंजीबद्ध बयनामा दिनांक 10.10.2012 के द्वारा अंतरित आराजी को प्रतिवादी संख्या 01 व मीरो पत्नी गुणेशा के मुतनाजा आराजी में निहित हक हिस्से से कम किया जाकर शेष आराजी पर उक्तानुसार वादी व प्रतिवादी का हक हिस्सा मुताबिक राजस्व इन्द्राज दुरूस्त करवाया जाना उचित प्रतीत होता है। अतः

आदेश है कि

वादी का दावा बाबत् इस्तक्करारहक, मंजूर किया जाकर इस कदर डिक्री जारी की जाती है कि मुतनाजा आराजी खसरा संख्या 209 मौजा आलपुरा रकबा 06 बीघा 06 बिस्वा में से पंजीबद्ध बयनामा दिनांक 10.10.2012 के द्वारा 01 बीघा भूमि के किये गये अंतरण तथा द्वितीय बेचान दिनांक 20.11.2024 से 13 बिस्वा के अंतरण को अप्रभावी रखते हुए पश्चात्वर्ती समस्त अंतरणों को आरम्भ से शून्य, अवैध व निष्प्रभावी घोषित किया जाता है। इस प्रकार मुतनाजा आराजी खसरा संख्या 209 मौजा आलपुरा रकबा 06 बीघा 06 बिस्वा पर प्रतिवादी संख्या 06 को केवल 13 बिस्वा आराजी का खातेदार घोषित किया जाता है। इस प्रकार मुतनाजा आराजी खसरा संख्या 209 मौजा आलपुरा रकबा 06 बीघा 06 बिस्वा (कुल रकबा 126 बिस्वा में

से प्रथम बेचान दिनांक 10.10.2012 से 20 बिस्वा, द्वितीय बेचान दिनाक 20.11.2024 से 13 बिस्वा कुल 33 बिस्वा के पश्चात् शेष आराजी 93 बिस्वा) में वादी को 1/5 हिस्सा, प्रतिवादी संख्या 02-04 को 1/5-1/5 हिस्सा घोषित करते हुये प्रतिवादी संख्या 01 का नाम कलमजन करवाने का अधिकारी घोषित किया जाता है। साथ ही खसरा संख्या 209 के अतिरिक्त शेष मुतनाजा आराजी में से वादी को 1/5 हिस्सा, प्रतिवादी संख्या 01-04 को 1/5-1/5 हिस्सा का हक निहित मानते खातेदार घोषित किया जाता है। इसी प्रकार वादी के मुतनाजा आराजी पर खातेदारी अधिकारों की घोषणा प्राप्त करने के पश्चात मुतनाजा आराजी में उक्त अनुसार संशोधित घोषित हिस्से का राजस्व रिकॉर्ड में अमलदरामद करवाने हेतु अधिकारी घोषित किया जाता है। साथ ही खसरा संख्या 209/3 को उक्त डिक्री से अप्रभावित रखा जाता है।

निर्णय की पृथक से पर्चा डिक्री तैयार की जाये।

आज 25.05.2026 को यह निर्णय मेरे द्वारा खुले न्यायालय में सुनाया जाकर हस्ताक्षर एवं मोहर युक्त जारी किया गया।

(केशव कुमार मीना आर.ए.एस)
सहायक कलक्टर
गुढामालानी

सत्यमेव जयते
गुढ़ामालानी

भागुकंवर बनाम चतरसिंह
2025/7
निर्णय दिनांकः-25.05.2026

न्यायालय

सहायक कलक्टर / उपखण्ड अधिकारी

गुढामालानी—बालोतरा

(पीठासीन अधिकारी —केशव कुमार मीना आर.ए.एस.)

वाद संख्याः— 2025 / 5(7 / 2025) दर्ज तिथिः— 20.01.2025

1. भागुकंवर पुत्री गुणेशाजी पत्नी भटसिंह
   जाति राजपूत पता 1 गेहुवाली नाडी नाकोड़ा तहसील सिणधरी 2 आलपुरा तहसील गुड़ामालानी

............................वादी

बनाम

1. चतरसिंह पुत्र गुणेशाजी
   जाति राजपूत निवासी आलपुरा तहसील गुड़ामालानी
2. चम्पाकंवर पुत्री गुणेशाजी पत्नी घमण्डसिंह
   जाति राजपूत निवासी गेहुवाली नाडी नाकोड़ा तहसील सिणधरी
3. दरियाकंवर पुत्री गुणेशाजी पत्नी मानसिंह
   जाति राजपूत निवासी मिठौड़ा
4. पखीकंवर उर्फ पवनकंवर पुत्री गुणेशाजी पत्नी सरदारसिंह
   जाति राजपूत निवासी आलपुरा तहसील गुड़ामालानी
5. विरधाराम पुत्र सांवलाराम
   जाति पुरोहित निवासी आलपुरा तहसील गुड़ामालानी
6. आसूराम पुत्र भारताराम
   जाति विश्नोई निवासी जुगताणियों की ढाणी, आलपुरा तहसील गुड़ामालानी
7. चन्दनसिंह पुत्र घमण्डसिंह
   जाति राजपूत निवासी गेहुवाली नाडी नाकोड़ा तहसील सिणधरी
8. माधोसिंह पुत्र तेजसिंह
   जाति राजपूत निवासी जीवाणियों की ढाणी तहसील गुड़ामालानी
9. बाबूलाल पुत्र भींयाराम
   जाति सोनी निवासी निम्बलकोट तहसील नोखड़ा जिला बाड़मेर

..........................प्रतिवादी

उपस्थित अधिवक्ता
वादीः— श्री नारायण कुमावत
प्रतिवादीः— श्री रामजीवन विश्नोई
श्री जगदीश विश्नोई
श्री जगदीश कड़वासरा

राजस्व वाद अन्तर्गत धारा— 88,188
राजस्थान काश्तकारी अधि0—1955

–:पर्चा डिक्रीः–

वादी का दावा बाबत् इस्तक्करारहक, मंजूर किया जाकर इस कदर डिक्री जारी की जाती है कि मुतनाजा आराजी खसरा संख्या 209 मौजा आलपुरा रकबा 06 बीघा 06 बिस्वा में से पंजीबद्ध बयनामा दिनांक 10.10.2012 के द्वारा 01 बीघा भूमि के किये गये अंतरण तथा द्वितीय बेचान दिनांक 20.11.2024 से 13 बिस्वा के अंतरण को अप्रभावी रखते हुए पश्चात्वर्ती समस्त अंतरणों को आरम्भ से शून्य, अवैध व निष्प्रभावी घोषित किया जाता है। इस प्रकार मुतनाजा आराजी खसरा संख्या 209 मौजा आलपुरा रकबा 06 बीघा 06 बिस्वा पर प्रतिवादी संख्या 06 को केवल 13 बिस्वा आराजी का खातेदार घोषित किया जाता है। इस प्रकार मुतनाजा आराजी खसरा संख्या 209 मौजा आलपुरा रकबा 06 बीघा 06 बिस्वा (कुल रकबा 126 बिस्वा में से प्रथम बेचान दिनांक 10.10.2012 से 20 बिस्वा, द्वितीय बेचान दिनाक 20.11.2024 से 13 बिस्वा कुल 33 बिस्वा के पश्चात् शेष आराजी 93 बिस्वा) में वादी को 1/5 हिस्सा, प्रतिवादी संख्या 02–04 को 1/5–1/5 हिस्सा घोषित करते हुये प्रतिवादी संख्या 01 का नाम कलमजन करवाने का अधिकारी घोषित किया जाता है। साथ ही खसरा संख्या 209 के अतिरिक्त शेष मुतनाजा आराजी में से वादी को 1/5 हिस्सा, प्रतिवादी संख्या 01–04 को 1/5–1/5 हिस्सा का हक निहित मानते खातेदार घोषित किया जाता है। इसी प्रकार वादी के मुतनाजा आराजी पर खातेदारी अधिकारों की घोषणा प्राप्त करने के पश्चात मुतनाजा आराजी में उक्त अनुसार संशोधित घोषित हिस्से का राजस्व रिकॉर्ड में अमलदरामद करवाने हेतु अधिकारी घोषित किया जाता है। साथ ही खसरा संख्या 209/3 को उक्त डिक्री से अप्रभावित रखा जाता है।

यह पर्चा–डिक्री पालनार्थ हेतु तहसीलदार गुड़ामालानी को प्रेषित की जावें। आदेश जारी हो। पक्षकारान अपना–अपना खर्चा स्वयं वहन करेंगे।

यह पर्चा–डिक्री आज दिनांक 25.05.2026 को मेरे द्वारा लिखवाई जाकर हस्ताक्षर एवं मुहर युक्त जारी की जाकर खुले न्यायालय में सुनाई गई।

(केशव कुमार मीना आर.ए.एस)
सहायक कलक्टर
गुढामालानी